

सेन्या यह ग्रंथको। श्री आचपि जो मरा प्रभू के हृदयको आसय। उन कृपानि निस्तरि
१७३ को पोहो है वो स्थिति के उद्धारार्थ यामे से देह न हो। यह सिद्धांत जानना सुभा
 । इति श्री वद्वभाचार्य विरचिते सेन्याम भिराप ब्रह्मकांठीका भाष्ये नमः
॥ अथ निरोधनसारांशं ब्रह्मकांठीका भाष्ये नमः ॥
 अथ प्रथम स्लोक मंगलाचरणको कहत है। **इति** नमो स्तुतुं स्मृतीनां
 भक्तानाम ब्रजवासिनां। ततः श्रीवद्वभाचार्य स्वकयत्नो निरोधकृत
यको अर्थ। नमो चरणमं श्रीहरिसयजी कहत है। जो नव श्री कृष्ण ब्रजमें
 नंदरायजीके घर प्रगट होके। जो ब्रज संबंधी लीला करी। तम अपन भक्त जो
 भक्त तथा ब्रजमें धीनंदरायजी। जो सादा जो सरवागोप सवनको निरोधक
 श्रीगोकाकोपे। तिनको मंगल प्रेम सोनमस्कार करत है। सो साक्षात् स्मृति
 भावत्म कस्वस्व श्रीवद्वभाचार्य जो फलभूतलमें प्रगट होत। स्वकोयनाम
 पंन अंगीकृत भक्तनको निरोधकत है। सो निरोधको प्रकार जानत नही। श्री
 नाजाने निरोधके संरोप। सो यह जताखे केलीय। श्रीवद्वभाचार्य जो निरोधक
 सन ग्रंथ आप्रगट कोपे। से सोम होदार श्री आचपि जो मरा प्रभू आप्रपे। तिन
 के चार कर्मलको मंगल नमस्कार करत है। या प्रकार मंगलाचरणको
 अथ प्रथम स्लोकको कहत है। **श्लोक**। यदुदरयशोदा नंदं दारिनां चैव
 गोपकानां च यदुदरं तदस्य स्यान्म महचित्। **अथ** प्रथम
 यशोदाजीके। पाछे नंदरायजीके। ताके अर्थ कदा नरो करत है जो
 सास्त्र में करत है। जो पिताने माना बड़ीत। जो कष्ट कार्यपिना करत है। श्री
 माता उर पुत्रका बरजे। श्रीपुत्रमाताको आजा माने तादे धनरा। श्री
 ताते माताको स्तुत। पुत्रविये धितासो सहस्र गुणा अधिकत। श्रीपिताम
 ताका संबंधहरे। अधिक कर जो मलाके उदरते प्रगटत। नोते उचरे स
 माताको आत्मात। नहां कोरि कहे नो श्रीठाकुर जो ता कोरि के गर्भमें आवि
 नो श्रीयशोदाजीके गर्भमें केसे आय। तहां करत है। जो लोकि कहीवसां जो
 लकजम्बलन। सो प्रकार तो श्रीठाकुर जो मंस्त भवे नहि। श्री अलौकिक
 वसंधसां नो श्रीनंदरायजीके घर। श्रीयशोदाजीके उदरते प्रगट भवे
 नोके २ वीं पाछे भाया प्रगटो। सो मायाके आवरतने प्रभूके स्वप्नान्या

नाहो जाता ताते माना नो आयसादा जो। तिनको निरोधके अर्थ नयान दायजी
 तिनको अर्थके निरोध करत है। श्रीरजो नंदरां। श्रीर ब्रह्म गोपवेउ चेतो।
 नयानाद चार सटसट रङ्गोपो तिनसवनको निरोध करत है। सो प्रकृतते है
 सो प्रथम जव श्रीठाकुर जो ब्रजविये प्रगट भये। तब सवनको दसन कर यह भाव
 उत्पन्न भयो। नंदयशोदाजी नो पुत्र भावमें मग्न भये। तब सब सरय भावमें मग्न
 भये। गोपो जनपति भावमें मग्न भये। परतु निरोध अदरो नही भयो। तब श्री
 कुलो न विचारो। जो भरे दसनते भाव तो सबको भयो। परतु निरोध अदरो
 नही भयो। तोन यह भाव निरोधविना रहेगो नही। सो निरोधका वेद्वीये वा
 ललीला करन लगे। सो बाल लीला करतमें कंसके पठोय गहस अर्थ। सो तिन
 ने नारके मत्तनको निरोधकोपे। जेसे पूतना कपट करके अर्थ। सो आवि
 ताको नार। सो जहा ताई श्रीन द्या होत। तहां नारि निरोध न देण। सोको न प्रकार
 तहां ताई पूतनाको उपद्रव नही भयो हने। तहां ताई नंदयशोदा वनभक्त रिसके
 केको बखनने त्विंता नही हने। जो बालकको बहत जननको। सहज प्रेमहोता
 श्री जवत पूतनाको उपद्रव भयो। तादिने नंदयशोदा वृजभक्त सवनके मन
 मंविता बहत भरे। जो या बालकको अकेलो छोडने नही। ये नो हमार सवनके
 प्राणत। ताते अथ पर श्रीठाकुरजी में मन लाग्यो। या प्रकार निरोधकाया तब
 पाही भंति जा जो गहसमार। त्यो त्यो सब भक्तनको भरे। श्रीरमे म श्रीठाकुरजी
 को लीला देखके भयो। या प्रकार सब देह भगवत पर भरे। तब श्रीठाकुरजी ने
 विचारकोपे। जो श्रीनंदराय यशोदा जी ब्रजभक्तनको तानि रोध सिद्धोते
 श्री ब्रज संबंधी जो ब्रजो। गाप भय ब्रजके वनविये प्रभु पंछीन नको निरो
 धको न प्रकार सिद्धोतगो। श्रीर यह ब्रजके जीवेत। सोनो को पर मी प्रपे। यह
 विचारके श्रीठाकुरजी वनमें ब्रजो चारन लीलाको अंगो कर कात भयो। सोय
 नमें जंगम स्थावर सबको निरोध भयो। ताहीते वेगु गीतमें ४ पर करे। जेव
 नारसुन गोवदे न पुलकित भयो। तस्में ते मधु अवन भयो। श्रीरगापव न मुख
 में लरो। बछ्या दूध पीव नो भूलगयो। त्रुगारिक पशु सब अपने चंचलता छो
 ष छोडोतारह। तसो मोनताको प्राप्त भयो। या प्रकार सम स्त ब्रजको विरोधोस
 द भयो। जो गोचारन लीला न करत। तो सवनको निरोध सिद्ध न होतो। तहां ताई

॥ रनेगो ॥ असका करे ॥ जो प्रथमतो श्रीने दरायजी के घर ॥ प्रगल्भ ने द पसोदरि ॥
 ॥ २४ ॥ हु गोपीतथा व्रजभक्त सवन को दर्शन भयो ॥ ह्ये लादे स्वके निरोध भयो ॥
 सो नव श्रीठाकुरजी गोचारन की लीला करन वन में पधार ॥ नवजी श्रीठाकुर
 जीके संगहें ॥ तथ वन में जो जीव रहे ॥ तिनको श्रीठाकुर जीके दर्शन ते निरोध
 सिद्ध भयो ॥ और ने दरायय सोदाजी औरि ब हु गोप गोपीतथा व्रजभक्त जो
 र में रहे ॥ तिनको तो अब श्रीठाकुर जीके दर्शन ते नहीं ॥ सो पहले तो निरोध
 पोह ॥ सो अब श्रीठाकुरजी विना ॥ इनको निरोध घटजायगा ॥ और व्रजमें जो
 न में पधार ॥ सो उनहें को जब संघ्याका होइगे ॥ तब श्रीठाकुरजी चरपधार
 तवरात्रको तो पशुपंथी सरखा स्थापिकको तो र्सी न नाहीं ॥ जो उनहें को निरोध
 निरोध भयो ॥ सो तब उनको जाते रहेगे ॥ तब न तो नदय सोदाहि इनहें
 निरोध होयगे ॥ नवनवार जीवनको निरोध सिद्ध होयगा ॥ तब श्रीठाकुरजीके
 प्राप्त के सो होयगा ॥ तहां कहत हैं ॥ जो श्रीने दराय पसोदाजी ॥ औरि वृद्ध गोपीत
 व्रजभक्तनको निरोध घरमें कोये ॥ सो दृढ़ निरोध नाहो भयो कहते ॥ दोनि
 सब भगवत पर होइगें ॥ औरि भनतो अर्द्धो नही भयो ॥ सो मनके निरोध कर
 नके लीये ॥ व्रजमें गोचारन लीलाको पधार ॥ कहते जहा तार मनको निरोध
 होय ॥ तहां तारि निरोध दृढ़ नाहीं ॥ जब कवह दुसंग मिले तो मनके निरोध
 ये विना ॥ इंडी सब विषय में लीन होइजाय ॥ औरि जब मनको निरोध होय
 वरिंदीन की कछू चले नाहीं ॥ तान श्रीठाकुरजी चर में रहिकें ॥ सब रंदिनको
 रोधकोयो ॥ औरि मनके निरोध करनके लीये ॥ वनमें गोचारन लीलाकार
 को पधार ॥ तैसे ही जव गोचारन लीला करि ॥ पाछे श्रीठाकुरजी ॥ जब घर में
 पाठ धरतें ॥ तब वनके जीवनके मनको निरोध विरह सो होतें ॥ सो व
 गोत गुल गोत में प्रसिद्ध है ॥ जब श्रीठाकुरजी गोचारनको वन में पधार
 नव गोपीजन श्रीठाकुरजीको गुणगान करते हैं ॥ सो विरह करि नभयत
 सगरी वनकी लीलाको अनुभव करे ॥ अपने हृदयमें साक्षात् दर्शनको
 सो विरह करके मनको निरोध दृढ़ होतें ॥ औरि ने दय सोदाजी रू विरह करि
 श्रीठाकुरजीको सुनिरन बाल भाव सो करतें ॥ जो मुख भये होइगे ॥ उर
 को न प्रकार रखन होइगे ॥ अब कव पधारगे ॥ या प्रकार न नही सब भगवत

पर होतें ॥ सो प्रकार वनके भक्त ॥ औरि घरके दोऊनको निरोध है ॥ औरि सो
 जनहें सो दिनके विरह करि गुणगान करते हैं ॥ औरि सखारात्रके विरह करि गु
 नगान करते हैं ॥ या प्रकार व्रजके संबंधो जीवनको निरोध श्रीठाकुरजीने
 यो ॥ सो इहां श्रीआचार्यजी महाप्रभु प्रगट होइके विचार ॥ जो निरोधको को
 र प्रकार तो जीव में हेनाहो ॥ औरि निरोध विना लीला रस जो अभ्यतें ॥ सो
 ग औरि विपोग ताके अनुभव होय नाहीं ॥ सो निरोधकी प्रार्थना जीवनको
 औरि अप करतें ॥ कोहते वेदमें कहते ॥ जो गुरुको प्रभुके प्रीतिनिरोध होइ
 उको होइ ॥ औरि उरके कोये जो सेवकतें ॥ तिनको प्रभुको प्राप्त न भोयो
 संसार सत होइ ॥ तो तासे वकनके निमित्त गुरु श्रीठाकुरजी सो प्रार्थना करे
 सो अपने नाम ले अपने दोष करके कहें ॥ जद्यपि अपने श्रीठाकुरजी सं
 मिल चुकेहें ॥ सबि वस्तुको सध होइ चुकेहो ॥ परंतु तउ सेवकके निमित्त
 अपने पर कहें ॥ यह मर्यादाहें ॥ ताते वेद मर्यादाके लीये अपने अंगीकृत भक्त
 हैं ॥ तिनके निरोध करके लीये ॥ श्रीठाकुरजी सो श्रीआचार्यजी महा
 प्रभु प्रार्थना करते हैं ॥ तहां श्रीआचार्यजी विचारकीये ॥ जो श्रीठाकुरजी
 को न दराय जीपशादाजी गोपी सरखाको संयोगत्मक सुख है तावात
 को अनुभव तो जीवको हे नहीं ॥ कोहते ॥ श्रीठाकुरजीने अपने कालके
 विष्टरेहें ॥ ताते संयोग रसकी प्रार्थना करेते ॥ कछू फल सिद्ध नहीं होयगे
 यह विचारके विप्रयोगकी भावना करत हो ॥ तहां श्रीआचार्यजी विचा
 रे ॥ जो विप्रयोगको प्रार्थना हत्व करे जाय ॥ जब जीवनको विप्रयोग होइ
 तब जीवको हरय होय ॥ जो मासोको न प्रकार श्रीठाकुरजी मिलेगे ॥ जो
 तो एक रू धमि नहीं हो ॥ श्रीठाकुरजीने विष्टरे बहुत काल भयो है ॥ या प्रकार
 कछू आर्ति होय ॥ तो में श्रीठाकुरजी सो विप्रयोगको प्रार्थना इकई ॥ नव
 इनको निरोध होइ ॥ यह विचारके श्रीआचार्यजी महाप्रभु श्रीठाकुरजी
 सो कहतें ॥ जो दुख जसोदाजी नदजीकोहो ॥ रतियादिक व्रजजोग कुल
 के सरखा गोप सब घृध गोपीजनको ॥ जो श्रीठाकुरजी गोचारनको के कब
 आवेगे ॥ एक दुख तो यह ॥ औरि द सगे दुख जे व्रजभक्तनकोहें ॥ सो अनिर्
 चनीय है ॥ कोहते में न च्यो ॥ सो यह होउ दुखमेंको ॥ रं चककनेकाकी प्रार्थना

॥ निरा ॥ करत हं जातुमदह कोहते ॥ उहां व्रज से यंधी भक्तन में तो अप्पर सपुत्र
॥ २७ ॥ विप्रयोग दुख कोरस ते ॥ तो कोरक कराका गोका हउ ॥ तहां कोरि संहक
 जो श्रीने हराय जो यसादा जो ॥ गोप वृध गोपी रक दुख तो इन को करे ॥ श्री
 गोपीजन जो अंतरंग व्रज भक्त ॥ एक दुख इन को करे ॥ सो न्यारी न्यारी प्राधि
 कें को रेसें काहे न करे ॥ जो श्री गुरु जो के मिले वो को दुख न दू यथा हार
 कोहे ॥ गोपी सरवा नरु कोहे ॥ श्री गोपी जनरु कोहे ॥ नतिं दुख तो यथा चार
 सोयह करे चरिये ॥ जो व्रज भक्त ॥ तिन को दुख हम को दुह ॥ नहां कलने
 जोस मत्त्व व्रज में गोपी जन के दुख हे ॥ सो अनिर्वचनीयेत ॥ श्री परज
 ननो जो यथाधिकार ॥ दुख सुख सवन को व्रज में हे ॥ ताते हमारे सब सत
 यथाधिकार दान करेते ॥ तो ताते हम दोड विप्रयोग रस को प्रार्थना कते
 यह जता थवे के लीये प्रथम नेह यसादा के दुख की प्रार्थना कीये ॥ पाठे व्रज
 कन को दुख को प्रार्थना कोये ॥ एक करी काकी ऐसी डली भजाते कोहे ॥ तो
 या श्लोक में यह सिद्धांत भयो ॥ जो यह विप्रयोग रस एसा डली भें ॥ सो श्री
 चार्ये जी के कानि ते का को प्राप्ति हेत हे ॥ या प्रकार प्रथम श्लोक में दुख जो
 प्रयोग त्म कना को प्राथे ना कीये ॥ **॥ २७ ॥ श्री को ॥** गोबुले गोपिका नांच सेवे
 व्रज बसिनां ॥ पत्सुखं समभूत न्मे भगवान् किं विधा स्यात् ॥ **॥ २७ ॥ याते व्रज**
 श्रव ऊपर प्रथम श्लोक में विप्रयोग दुख को प्रार्थना करो ॥ नहां वारी संहक
 जो श्री गुरु जो तो परम हयाल हे ॥ उन सो जो मागे सो मिले तव तुम तो
 ख माग्यो ॥ सो श्री गुरु जो दुख ही हे ॥ श्री श्री गुरु जो को दियो तो
 त्यर ॥ सो फेर काहू की साम धेना हो ॥ जो अन्याय कर सक ॥ सो श्री गुरु
 जव दुख दान कीये ॥ जो श्रीने हराय जो यसादा जो गोपीजन को विरत तो
 सो या भाति तुम्हारे जो व को तुम्हारी कानि सो सिध होपगे ॥ तव जो सर
 रासादिक लीला मुख्य फल ॥ जो ने हयसादा जो को बाल लीला को सुख
 श्री सरवा गोप संग खेजत हे ॥ सो रित्यादिक संयोग को सुख तो नुम को
 या हनुम्हारे सब कन को नहो मगे ॥ मदा विप्रयोग रहेगो जो तुम ने माया
 तव वे तुम्हारे जो वन को संयोग रस को सुख न भयो तो ॥ तुम्हारे पुष्टि मा
 कोहे ते हरेगो ॥ उहां श्री गुरु जो पुष्टि रस रासादिक लीला में सधकी

ताने वे पुष्टि भक्त भये ॥ सो संयोग रस तुम्हारे सब कन को नहो मगे ॥ तो तुम्हारे
 उष्टि मागे करेगो ॥ यह वादो आसंका करे ॥ तहां कहते हे ॥ जो उहां श्री गुरु
 जो श्रीने हराय जो को ॥ जो सादा जो को बाल लीला को सुख हीये ॥ पाठे गोप च
 रावन जान लागे ॥ तवीव प्रयोग सुख दीये ॥ तैसे तो व्रज भक्तन को रात्रे के रसा
 दिक लीला में ॥ अन क सुख संयोग हीये ॥ पाठे दिन को गो चारन लीला में इन कुं
 विरह दीये ॥ सो सब व्रज के लोगन को विरह पात दीये ॥ जो संयोग रस हृद होर
 कोहे ॥ एक तो वर वहुत सा निग्रही जो तो पद भरे ॥ पाठे सब वस्तु में ते अरुच
 होय जाय ॥ श्री भूय लागे नव दीजे ॥ तो सामे श्री को सवाह अधि क श्री वे तैसे
 हे संयोग रस तो ॥ श्री ठाकुर जी प्रथम सब को करवायो ॥ परंतु श्री प्रेम लक्षण
 भक्ति को दान करेते ॥ सो इतने ही में सब इंद्री मन अग्रहो मं जाय ॥ तो श्री मं
 रव्य फल को अनुभव होय ॥ ताते विरह कराय ॥ ताते विरह मुख्य फल हो ॥ ताते
 विरह करके सब संयोग रस को अनुभव होत हे ॥ ताते हम उन व्रज भक्त के
 रव जो हे ॥ विरह ताही को प्रार्थना करत हे ॥ उह दुख के काणा का को हम पाइके
 त्म को सकल संयोग को लातो हे ॥ ताको अनुभव होइगे ॥ श्री या पुष्टि मग
 जो श्री गो कृत जी वे हे ॥ तिन को जव विप्रयोग को कराका प्रहोइगे ॥ तव उन
 हूं को समस्त संयोग त्म कलीला को अनुभव होइगे ॥ ताते हम विप्रयोग की
 प्रार्थना करत हे ॥ परी हमारे मुख्य फल हे ॥ सो श्री चार्ये जी प्रथम दुख की
 प्रार्थना कर ॥ तव सुख को प्रार्थना कते हे ॥ जो श्री गुरु ल में श्रीने हराय जो
 यसादा जो गोप सरवा गाय गोपी जो व्रज भक्त तथा सपत्न व्रज संवंधी जो प
 दाये हे ॥ जितने जो वहे ॥ तिन सवन को श्री ठाकुर जी को संवंधे ॥ सो श्री ग
 रुर जो दोषा इस्लीला में पर प्रिवोये हे ॥ श्री यसादा जो मारन के अर्थ ॥ उम
 ल सो वाधे हे ॥ तापें ऊरव ल का ठको हे सो व्रज को का ठो ॥ तापें पर सचन के
 जो व्रज के काठे में वंध्यो हे ॥ तो व्रज के चेतन्य जी वे हे ॥ उन के वसरतो मा
 मं कहा करेना ॥ श्री श्री भागवत में श्री वेदावन में ब्रह्मन को कादि ॥ श्री गुरु
 र जो श्री वल्लभ जी जित वहुन को परे ॥ ताते व्रज भक्त भगवद संवंधी हे सो
 भगवरी गोप हे ॥ वे देखे गो कुल के दुख ज ॥ तथा धन धीन वं सरप करंग
 नि सो व्रज के स्व को जो सुख हे ॥ तो मो को कृपा करे हे ॥ प्रा प्रकार श्री

॥ निरोध ॥ आचार्यजी महाप्रभू प्रथम दुख को भावना करी ॥ पाछे ब्रजसंबंधी सुख को
 ॥ १०६ ॥ धिना करी ॥ तहां बाहो आसंका करे ॥ जो ब्रजमें तो नंदराय जो पसोना नीपे ॥ तया
 पसरवा भक्त्यादिक सवनको प्रथम श्रीठाकुर जो संयोगरसको अर्थ
 कारपो ॥ पाछे विप्रयोग रसको अनुभव करयो ॥ सो पचाध्यादि में प्रसिद्ध है ॥ अ
 उन तो अपने उष्ट्र मार्गो भक्तनके नीपे ॥ प्रथम दुख को प्राथिना करी ॥ पाभति
 उष्ट्रो उष्ट्र मार्गो के फलमें ॥ और ब्रजभक्तनके उष्ट्र मार्गो के फलमें विरोध
 तहें ॥ और आचार्यजी महाप्रभू कहत हैं ॥ उहा ब्रजसंबंधी सब पदार्थ अज्ञेय
 हैं ॥ और निर्देय जीव हैं ॥ सो आशुवोधनीजी में कहत हैं ॥ जो श्रुतिरूपमिष न
 नित्य सिध्या इत्यादिक तो गोपीहं ॥ जो सोहा जो धराप्रधीहं ॥ ने दराय जो अंगार
 सरवा गोष सवे देवता हैं ॥ पक्षी पुनो प्रवर हैं ॥ और अनेक काल सो प्रभू के निर
 को आतिरती ॥ तत पर ले ब्रजके जीवन को ॥ संयोगात्मक सुख है ॥ पाछे वि
 प्रयोग स्वरोंके संयोग सहाइ कोय ॥ सो नित्य संयोगरस और विप्रयोगरस
 और आकाले काल करे दुसंग ॥ अन्या अपकार जीव श्रीठाकुर जो को भूलगयो
 और अपने स्व रूप को भूल गयो ॥ ताते श्रीठाकुर जो तो विद्युत्परे ॥ ततो
 योगरस याको सिधेता न बहन कीटन है ॥ और श्रीठाकुर जो ते विद्युत्परे वहुत
 न भये ॥ ताते विरहनाही होत ॥ अज्ञान करे कें लौकिक सक्ति होत रही ॥ त
 हम इन जीवनके नाम त ॥ पहले विप्रयोग कराका को प्राथिना केनी ॥ सो
 प्रयोग जब पर अधुनीक जीव को प्रभूदान करे ॥ तव या जीव को यह ज्ञान
 जो में तो प्रभूको दासहं ॥ सो मोको तो पर लौकिक ॥ श्रीठाकुर जो के तुलना
 वारो ॥ यह ज्ञान करे पाछे श्रीठाकुर जो के मिलने की आति होगी ॥ और
 लौकिक सक्ति सब धीरे जायगी ॥ पाछे जब व्यसनो अवस्था सिद्ध होगी ॥ त
 वपाको संयोगरसको चरंच छुवोहोगी ॥ ताके पाछे अत्यंत विरह होयगी ॥
 ता विरह की तन्मयता होगी ॥ तव याको संयोगरसको लोलासरित अ
 नवहोपगी ॥ ताते फाँदे के यह जताये ॥ जो विप्रयोग विरहविना संयोगर
 को प्राप्ति नाही ॥ ताते हम फह अधुनीक जीव के निमित्त ॥ पहले विप्रयोग की
 धिना केनी ॥ पाछे संयोगात्मक सुख की प्राथिना कीनी ॥ या प्रकार करे श्री
 ठाकुर जो ॥ उहव जी को ब्रज जो श्रीगोकुलको पठये ॥ तव अति विचनीप

विरह
 भक्तनको सुख भयो ॥ सो कहत हैं ॥ या प्रकार ॥ स्नोक को वरान भयो ॥ और क
 तहें ॥ स्नोक ॥ उहवागनेन जात उत्सव पसु महान पया ॥ बंदावने गोकुले बात था
 मेनन सी कंचित ॥ अध्याको अध्या ॥ अरु पर प्रथम ब्रजसंबंधी दुख ॥ विरह रूपता
 को प्राथिना करी ॥ पाछे ब्रजसंबंधी संयोगात्मक सुख की प्राथिना करी ॥ तहा बाहो
 जो श्रीठाकुर जो जव ब्रजमें रहे ॥ ११ वरस तारि संयोग भक्तनको रहे ॥ अ
 जो श्रीठाकुर जो जव ब्रजमें रहे ॥ ११ वरस तारि संयोग भक्तनको रहे ॥ अ
 रके वी प्रयोग लो ॥ पाछे जब श्रीठाकुर जो मधुरा पधो ॥ तब तो विप्रयोग ॥ सो उष
 संयोग विनाके संरेगा ॥ और जब विप्रयोग दूगयो ॥ तव परले जो संयोग ॥ तया वि
 प्रयोग कर निरोध भयो ॥ ताको नास होरो ॥ तव श्रीठाकुर जो को प्राप्त के संरो
 रगी ॥ पर करि संदेह करे ॥ तहां कहत हैं ॥ जो श्रीठाकुर जो मधुरा पधो ॥ सो तो ब्र
 जभक्तनको निरोध अंसह ॥ कर के लीपे ॥ कहेने ब्रजमें श्रीठाकुर जो पसो
 दाजीके प्रगर भये ॥ और मधुरा ते पधो देव को जीते प्रगर होके ॥ सो दोड स्व
 पको रक्तातानम रक होर मये ॥ तहा ऊपर तो सब के दे बत मयादा उष्ट्र ॥ और
 भील उष्ट्र उष्ट्र ॥ सो सब स्वरूप भाव में वरान रहे ॥ सो श्रीठाकुर जो ब्रज में समस्त
 भक्तनको संयोगात्मक विप्रयोगात्मक सुख हैके निरोधको ॥ और भक्तनके
 हरके सब पदार्थको निरोधते ॥ रास पचाध्यादि में भयो ॥ देर रूपा प्रकार सब
 को निरोध भयो ॥ और मनके निरोधमें कच्छुत्तर दिग्द ॥ कहेने श्रीठाकुर जो
 के संयोगमें तो दाहर मरासिध भयो ॥ पंचाध्यादि में अंतर्धानमें कच्छुत्तरको
 निरोध भयो ॥ पूरानहीं भयो ॥ करते ॥ बलस्थल लीलाजव पंध्यादि में करके
 तव श्रीठाकुर जो ने करे ॥ जो लुम अरु पर जाउ ॥ तव भक्तने श्रीठाकुर जो सोक
 हो ॥ जो हमारे पते उच मातापिता पूछेंगे ॥ तव हम करा करेगा ॥ तव श्रीठाकुर जो
 बोले ॥ जो वे तुमको इहां आयेन जा नेंगे ॥ तुम सुरेवन जाउ ॥ सो पर पूरान मन
 के निरोधमें कसरर हो ॥ जो श्रीठाकुर जो केने कच्छुत्तरके ॥ ताते उच मातापिताकी
 उच आदि ॥ तव श्रीठाकुर जो मनके निरोध करनके निमित्त ॥ श्रीठाकुर जो सब
 के देख तमधुरा पधो ॥ तो तो मपीरा उषे तम ॥ और श्रीपसोदा जो के च प्रग
 र भयो ॥ जो भावात्मक उष्ट्र उष्ट्र स्वस् ॥ सो तो ब्रजभक्तनके रूपमें स्थिर भयो
 सो ब्रजभक्तनको रवधरनाही करते ॥ उपर प्रसिद्ध नो रश्मि नाही ॥ सो अत्यंत
 तो वीरह भयो ॥ तो विरह कसो नहीं जाय ॥ अतः कानमें भयो ॥ ताकरके पूरा

॥ निरोध ॥ निरोध भयो ॥ सो नव मूर्खी विरह का केंठोय ॥ तब श्री गुरु जो उनही के इतर
॥ २७५ ॥ ते प्रगट होया ॥ सब लीला करे ॥ ता आधार का के देर की स्थित रहे नहि ॥ तोर
 मो अवस्था होय जाय ॥ सो जव पाछे उनको चेत न्यता होय ॥ तब स्थित हो पाय
 ठाकुर जो उनके रूप में ॥ सो भक्त यद जो नही ॥ जो श्री गुरु जी रमारे पास
 ताते भक्त को यद दोष बहि ॥ श्री गुरु जी भरे ॥ जो हम को छोड़े ॥ श्री गुरु जी
 मथुरा पधारे ॥ सो दोष इर कर बके लीये ॥ श्री गुरु जी पि चार कोय ॥ जो रमारे
 को दोष कैसे इर होयगा ॥ मनो उनके पास रहत हो ॥ सो परवश भारो दाखे ॥ तो
 गवरी के संगिना दूर नही होय ॥ यामें यह जताय ॥ जो भगवान सब के हृय में
 परं भगवरी के संगिना जाने न जाय ॥ यह जान के श्री गुरु जी ॥ अपने पास
 प्रिय अंतरंग भक्त सखा उद्धव जी तिन को पठाये ॥ सो प्रथम तो श्री कृष्ण ने श्री
 यजी के घर आय ॥ सो के सहे ॥ उद्धव जो जिनके आयते ब्रज में उहुन आने दूपाये
 सो नंद पसाह जो को प्रेम देखिके ॥ उद्धव जो कुत प्रसन्न भये ॥ पाछे दूसरे दिन
 त काल गोपिन सीमले ॥ तब गोपी जन से कात ले जाय ॥ अपने प्रिय को सीमले
 पूछत भई ॥ अत्यंत विरह सहित सो उद्धव जो गोपीन को प्रेम देखिके ॥ अति
 इर दे ॥ तब उद्धव जी ने कही ॥ जो तुम से सो विरह क्यों करत हो ॥ श्री गुरु जी तो तु
 रे पास होतें ॥ तुम अतः कानमें विचार के दोयो ॥ सो तब गोपीन के मन को प्रकृति
 रोध सिध भयो ॥ ताहीने श्री आचा ये जी महा प्रभू कहत रहे ॥ जो परले स्नाक में
 ब्रज भक्तन के विप्रयोगात्मक विरह को प्रार्थना कीनी ॥ दूसरे स्नाक में संगे
 गात्मक सुख के भाव ना कोनी ॥ अवतीसरे में केवल विप्रयोगात्मक उद्धव
 अपे ॥ सो ब्रज भक्तन को कहा दसा भई ॥ सो रसके कनका को प्रार्थना कात
 जो मो को कवि सिद्ध होयगा ॥ सो उर समय के सोहे ॥ जब उद्धव जो ब्रज को घेले
 और उद्धव जो के सहे ॥ उत्सव रहे ॥ सो उत्सव कहा जो परम आनंद होय ॥ सो
 गोकुल में आवत ही परम आनंद भयो ॥ काहेते महा सुभावे ॥ भगवरी प्रथ
 श्रीने दृश्य जो के घर आय ॥ सो सगरी गवरी परम आनंद में ॥ श्री गुरु जी को
 गावन वीती ॥ पाछे दूसरे दिन बृंदावन में गोपी जन सो ॥ जो संदस पूछते में
 नहीना वीते ॥ सो स्नहर सगोपिन के हृय में भसोहते ॥ सो सब संयोग स विप्र
 योगर स होऊ प्रगट भये ॥ सो सब सन में उत मोत महे ॥ नारख को क राकि

आचरिजी महा प्रभू कहत रहे ॥ जो हेना बनी को कव प्राप्तेगी ॥ यह निरोध को प्र
 का करे ॥ तो तब विप्रयोगात्मक ही सुख रहे ॥ ता के अंतर हूं संयोग ही सबे ॥ सा प्र
 कार ॥ स्नाक को निरूपन भयो ॥ प्रव और कहत रहे ॥ स्नाक ॥ महता कृपया पावत
 कार ॥ स्नाक को निरूपन भयो ॥ प्रव और कहत रहे ॥ स्नाक ॥ महता कृपया पावत
 भगवान ह्ययि ध्यति ॥ ताव शनंद सहेह ॥ कोर्त मानः सुखापते ॥ ४ या को अर्थ
 अत्र अत्र स्नाक में ब्रज भक्तन के निरोध को प्रकार कहे ॥ तामें विप्रयोग सुख
 फल वताये ॥ तहां वारी सहेह के ॥ जो यह निरोध को प्रकार हे ॥ सो तो ब्रज भक्तन को
 सिधये ॥ और आधुनीक जीव को मन तो लौकिक साकेहे ॥ सो पुशुवत कलि ॥
 काय के जीव पर रहे ॥ तिन को ब्रज भक्तन को भाव के सें सिध होयगे ॥ इनको
 ताव योग विप्रयोग कार को जान न होतें ॥ और निरोध को साध नर कछ ना हो
 ते निरोध की कला बान रहे ॥ और तुम तो निरोध के पाछे फल दिसा की वान कहे
 तो यह फल दसा तो उत मोत महे ॥ ताते उद्धव जो हू परम भगवरी हे ॥ सो ब्रज भक्तन
 के भक्ति को महात्म जाने ॥ और जीव को कोल प्रकार निरोध सिध होय ॥ सो निरोध
 के साधन कहे ॥ और निरोध सिध भ पाहे पता की क्रिया कहे ॥ और फल कहे ॥
 यह को ई सहेह करे तहां कहत रहे ॥ जो पर प्रथम ब्रज भक्तन को सिध करे ॥ सो
 सब जीवन को फल साधन कहेतें ॥ सो पा भाव सोंकारने ॥ जो जे सें उद्धव जो भाग
 वंदोहते ॥ परं ब्रज भक्तन को रीत को प्रेम मल साणा भक्ति को रव वान रनी ॥ सो ब्र
 ज भक्तन शोते रवे के करे ॥ जो आज ताई न को रसे सो भक्त भयो ॥ न का हू को
 प्रभु से सो दान दोयो ॥ तहां को ई कहे जो ब्रसि शिवादि र वेर भक्तें ॥ और हू
 ह अंतरंग भक्त हे ॥ सो तुम ब्रज भक्तन में कहे ॥ अधि क भक्तें ॥ तहां कहत रहे ॥
 जो शिव ब्रसिदि क व भक्तें ॥ सो आत्मा पर भक्तें ॥ काहे ते परमात्मा पर न हो
 अपने सुख के निमित्त भजन करतें ॥ अपने आत्मा प्रसन्न कावे केलीये ॥ और
 शास्त्र करे भक्तें ॥ और ब्रज भक्तें ॥ सो परमात्मा पर भक्तें ॥ अपने आत्मा के
 लोपे भक्ति को जतन नारु करतें ॥ श्री गुरु जी जो परमात्मा तिन के संतु
 एका वे के निमित्त ॥ भक्ति में तत्पर हे ॥ नाते सब ते उत मोत म भक्तें ॥ सो
 ब्रज भक्तन की भक्ति देख के ॥ उद्धव जो परा प्रार्थना कोयो ॥ जो मो को पे सिद्ध
 अव स्थ होय ॥ स्नाक करे ॥ आसा न हो चरणेण जघां मरुत्या बृंदावने ॥ किन
 पि ग्लम लोष धीना या दुस्त्या ॥ स्वजन नार्य पथे च हित्वा भे जु उ कुं दे पर

श्री गुरु जी

निरुते ॥ बीशुविभिर्विभ्रग्नान ॥ यह करे जो जेसें ब्रज भक्त हैं ॥ तिनके चरणाकमलको
 जोरणे सो अत्यंत दुर्लभ है ॥ तिनके प्राप्तके अर्थ श्रीवृंदावनको प्रथममें प्रणम
 नामघासेमें फलतरे ॥ तामें अनेक प्रकारकी अर्थयधी हैं ॥ नाम एकमें सो वे तिन
 चरणाविंदकी रजको संबंधभयो ॥ तहांकरे ॥ ब्रजभक्तनके चराननको प्रार्थनाकी
 होकरतहो ॥ तहांकरतहो ॥ जहां ब्रजभक्तनके चराननको रजको संबंधभयो ॥ तहां
 श्रीठाकुरजीके चरनकमलकी प्राप्तहोए चुको ॥ योमें संदेह नहीं तहांकरे ॥ तहां
 न वृंदावनकी अर्थयधीहोए वे को प्रार्थनाकरे ॥ सो वे जो और वे उ उ उ हों ॥ तिनको
 पूजलयाइ ताको प्रभु अंगीकारकरतरे ॥ तहां भक्तनकी सर्वो हा सो होए वे को प्रार्थना
 को न करे ॥ तहां करतरे जो दासीकी प्रार्थनाकरे ते कहं इनके सदृशभाव ॥ अत
 नो उलटो अर्पणधरोय ॥ और वे अहंके फलपूल प्रभु हाथसो परसकरतरे ॥ अर्पण
 करे कातरे ॥ सो नको होय तो में अज्ञानो ॥ नरे मनमें उक्व होय ॥ जो प्रभुको
 स्वको परस भयो ॥ अब भयो अंगीकारहोयगा ॥ अब नोसमानको नही ॥ यरगि
 र वहुत अनराधतेय ॥ और चंडे ब्रह्मनकी प्राक्वदुन दिनमें दोय ॥ ताते गुल्मल
 इत्यादिक अर्थयधी मोकांरूपाकारके देउ ॥ तब मोको सिद्ध होय ॥ यह अत्यंत दुर्ल
 है ॥ जो चरणांरुणको संबंधहोए के तत्काल कच्छदिनमें प्राप्तहोय ॥ या प्रकारकी
 के ऊपरवादीको अस्काह ॥ जो प्रथम ३ श्लोकको कीरके ब्रजभक्तनकी निर
 करे ॥ तंतु यह अधुनीको निरोधको न प्रकारसिद्ध होय सो करतहो ॥ जो परभ
 वरोहें ॥ ज नकी बुद्धिजाय ॥ सेसे ब्रजभक्तनको निरोधने लीन भयो ॥ नाम ब्रजभ
 क्तनके निरोधको साधनमें तत्परते ॥ पुष्टि मार्गमें तिनको शरण अर्पके ॥ त
 निरोधको प्रकार इनमें जान नो ॥ कारते जो श्रीठाकुरजीने ॥ पुष्टि मार्गमें जो जेवे
 सो तिनको ब्रजभक्तनके भाव ॥ और उनको निरोधीवना ॥ पुष्टि मार्गके फल
 हो पावेगे ॥ ताके लीपें श्री अर्चपिजीको प्राग्व्य कराये ॥ तहां श्रीठाकुरजी अर्प
 प्रगट भये ॥ ता पांछे श्री अर्चपिजीको कुलतिनको विस्तारकोय ॥ जो उन वंशभ
 कुलके घर श्रीठाकुरजीसर्वीरीवराजें ॥ तहां ब्रजभक्त श्री अर्चपिजीको कुल श्री
 श्रीगोवर्द्धननाथजी उनकेसय श्रीठाकुरजी और ब्रजभक्तनको भाव रूपजी
 सर्वसंबंधकासंभव ॥ अधुनो कजेव नके लीपें प्रगटकीपेहो ॥ कारते ॥ इन ब्रजभ
 क्तनको स्वरूप श्रीठाकुरजीको स्वरूपसाक्षात् ॥ लौकिक करतके जो वतिनके अ

भवमें आवें नाहो ॥ तहांके लीपें श्रीपरो सबलोला अर्चको साविप्रो सहेत श्री
 अर्चपिजीपधरो ॥ तो ऊपर भुवलोको भेविप्रकृष्ट होवे ॥ या प्रकारप्रगट भये ताते
 यह जो पुष्टि मार्गमें ॥ जो श्री अर्चपिजीद्वाराजाजीवको ब्रजसंबंधभयो तिनको
 यह विचारकरतय ॥ जो ह्म सबलोलासाभिप्रोहें ॥ ताते श्री अर्चपिजीकी कीर्ति
 हीवके इतहांको वरलोला स्तोत्रको ॥ भावनाकरें कैसा ॥ रहले तो सबसवाको प्रकृ
 स्जानो ॥ नापांछे नुजावितजाय था सीतके ॥ तब श्रीठाकुरजीमें विनपेगलेय
 ताकोके बुद्धिनिमित्तहोय ॥ हृष्यमें प्रकासहोय ॥ तब श्रीठाकुरजीके गुनगानको
 ताकरेंके मनको मेलदूहोय ॥ कारते ॥ गुनगानविना परमात्मा जो श्रीठाकुरजीको
 गुनगानको ॥ श्रीठाकुरजीसो प्रसन्नहोए तब तनुजावितजाका के तवातो
 कोय ॥ तंतु श्रीठाकुरजीको लोलाको गुनगानतो कोया ॥ तहांनाश्चिन्म लौकिकमें
 जाय ॥ और गान श्रीठाकुरजीको बहुतही प्रियहो ॥ अर्पणने जो अर्पणही गुनके सं
 तुष्टहोतहो ॥ याभावसो रहे ॥ तो अर्पणभाव उत्पन्नहोय ॥ तब पाको विरह उपेज विरह
 करके संयोगकरके संयोगात्मकसंगरो सुधतेय ॥ तो भावको न प्रकार उत्पन्नहोय
 कैसे सेवा गुनगानको ॥ तो अर्पणकरतहो ॥ या प्रकार ४ श्लोकको करीन भयो ॥ अब
 और करतहो ॥ श्लोक ॥ नरतां ह्यसया यद्वदके तेनं मुरयंदसह ॥ नत थालौकिका नां
 तुस्निग्धभोज नरुसवता ॥ ॥ याको अर्थ ॥ अर्पणवर्तिस्वदेह करतहो ॥ जो तुभस्य तो
 श्रीठाकुरजी श्री अर्चपिजीके प्रगटकोय ॥ नहाथो ॥ नहाथो गोवर्द्धननाथजीप्र
 गटभये ॥ और लोलासाभिप्रोह प्रगटभई ॥ सोय जीवतनुजा सेवाको ॥ तासा अ
 माकुहोय ॥ और गुनगानसो मनको मेलदूहोय ॥ तासा अभाव उत्पन्नहोय
 सोया अधुनो कजेवको तहां नही ॥ श्रीठाकुरजीको सेवाको प्रकाजानत
 नही ॥ और गुनगानको न प्रकारको ॥ जगतमें अनेक प्रकारसो कल्पनाका के गान
 करतहो ॥ सोस्निग्धभोजनरुसवता ॥ गायवेको अर्थ न मनसे विचारकरके
 गावे ॥ सो बुद्धिकाहोकोहे कारके नही ॥ सोपर श्रीनुजावको भाव ॥ और निरोधको
 सिद्धहोय ॥ या प्रकार करिके तहांकरतहो ॥ जो वजो श्री अर्चपिजीके पुष्टि मार्ग
 में अंगीकृत भयो निवेदनभयो ॥ तो याभावसो सेवा और गानको ॥ तो करतहो
 जावालक ह्म ब्रह्म ॥ संबंधभयो होय ॥ अर्पणगुरुसा रनें मुख्य श्रीस्वापिनेजी
 को स्वरूप जाननो ॥ और उनकेसय श्रीठाकुरजीजहां बलसंबंधकोपोहोइ

॥ निरोध ॥ सोई साक्षात् श्री गुरु प्रीति उद्योग ॥ और भगवद्दे तउनको प्रीति कृत है ॥ सोई अतः
 ॥ २७ ॥ दासो जननें ॥ तोए से भगवद्दे सो भाव सो मिले ॥ और अपने गुरु के पदो जो बसु
 गवत्संबंधो हवे ॥ सो सब लोला संबंधो जाने ॥ ऐसे जे भगवद्दे सरवा अंतरंग
 पदे ॥ सोई गुनगान करे ॥ और उ नही सो सीरवने ॥ सो कहाचित भगवद्दे को को
 न और अन्य मार्गो सो मोखो जाय ॥ तो वाके बास सर्व ध्यान सीरवने ॥ न गावने का
 हते गंगाजल तो सुद्ध है ॥ परंतु कोइ हो न जात के पात्र मे होइ ॥ तो कामन अत्रे ॥ जो
 गजल को पात्र होय ॥ तो मे गंगाजल भरो होय ॥ तो मे एक बूट मद्रा को पर जाय
 तो सब पहा लो हो जाय ॥ सो जे से पात्र मे जे से जले ॥ ते सो सुध उज्वल है ॥ जो
 जे सो संबंधो ॥ ते सो रंग होय ॥ परंतु उजलता गइ ॥ तो ते सो विचार अपने मन मे
 उरुन बा भगवद्दे होय ॥ ते न की आजा प्रमान जाने ॥ तो भगवद्दे तारा प्रसन्न हो
 तारा प्रथम भगवद्दे को रूपा द्विष्ट होय ॥ एरु को रूपा विना जतन नही होय ॥ परति
 अं जानने ॥ सो ज व गुन गान करे ॥ सो दुन या को अ न स्य जा भके ॥ श्री स्वामिनी जी
 सी ठाकुर जी सुनु ए होय ॥ एरु को रूपा विना जतन नही होय ॥ या प्रकार अधुने
 क जीव को उष्टि मार्ग सिद्ध होय ॥ भाव अधिक अधि क दूइत जाय ॥ अन्ये त रूपा
 के पर उरुय फले ॥ कहते पर अ न न्य ता आवने ॥ पर दृष्ट भाव राखने की दिने
 उरुय उपाय तो उष्टि मार्ग भक्तन को बही है ॥ और नही ॥ कहते जो भगवद्दे न को
 वानी हो ॥ तो तो भगवा न हो की वानी हो ॥ कहते जितने गुण भगवान मे है ॥ भगवान
 बट गुन पूर्ण है ॥ भगवान सर्व सामर्थ्य मुक्त है ॥ कहते भगवद्दे जो साक्षात् प्रभु की
 लीला देखते हैं ॥ ते से ही भगवद्दे लीला भगवद्दे गावते हैं ॥ सो प्रभु को अनुसार की
 लीला गावते हैं ॥ जे सो प्रभु जा समे लीला करतें ॥ सो श्री ठाकुर जी के अनुसार
 श्री भ प्राप सहित करतें ॥ अपने सुख नही चहते ॥ तो श्री आचार्य जो सुवोधी
 जो मे रहते ॥ जो भगवाने से उपाद सहित स्नेह करतें ॥ और ब्रज भक्तन को
 निरुपादि कलेह है काहे ॥ भक्त जो श्री ठाकुर जी सांभला की इच्छा करतें ॥ सो
 केवल श्री ठाकुर जी के सुख देना ही ॥ अपने अर्थ नही ॥ जो भक्त ही अपने सुख गीत
 ने इन को भक्त न कहिये ॥ ते में ज बकुष जाये श्री ठाकुर जी पधार ॥ नव से ससा
 त भगवान को पाईके ॥ तुष्ट अपने सुख भाग्यो ॥ तो न सुकरे वजो न दुभी व करे ॥
 उपाधिक कलेह है ॥ सब श्री ठाकुर जी को सुख देना ही करतें ॥ सो प्रथम मूल वि

चार जो श्री ठाकुर जी की प्रथम इच्छा भई ॥ जो रमन कीये ॥ तो रमन सति प्रीति प्राप
 होइ तो रम रा होय ॥ अ न रम न तो स्विदा सर्व काल विषे है ॥ यह श्री ठाकुर जी की इच्छा
 होत है ॥ सब ब्रज भक्तन के प्राग रूप भयो ॥ जो लोला सति प्रीति सब प्राग भई ॥ तो सब ब्रज सर्व
 धी लीला रमना तो ब्रज भक्तन को है ॥ सो सब श्री ठाकुर जी के लोपे ॥ तो ब्रज भक्तन
 को श्री ठाकुर जी ॥ श्री विषे निरुपाधिक लोप है ॥ ते से हो यह श्री आचार्य जो के उष्टि मार्ग
 मे से वाते ॥ तो केवल श्री ठाकुर जी के सुख देना ही है ॥ तो ही भक्ति इन के से व क अ न
 ल भक्तन है ॥ सो श्री ठाकुर जी को श्री भ प्राय ॥ जे सीना से जे लीला ॥ तो के अ न
 सा कर्तन गावते हैं ॥ कहते अ न न्य भगवद्दे ॥ ति नही को अ न भव जता वत है
 ति न ही की कल्प्ये जे गुन ॥ श्री ठाकुर जी और भगवद्दे या प्रकार समय जो गान कर
 वाय प्रकार गावने ॥ जो भगवद्दे कृत जो श्री ठाकुर जी ॥ नि न को जान को है ॥ जे से
 उं ह सामि प्री अ न्य त धी मि श्री सहित उज्वल ॥ रम स्वद सहित ॥ तो श्री ठाकुर
 को अ न गवत वरु त स्वा होय ॥ पाछे जो महा प्रसाद लेय ॥ तो कृत धी होय ॥ ते से भ
 गवद्दे कृत वानी सुने के श्री ठाकुर जी ह संतु ए होय ॥ और जीव कल्पान कर के अ न
 ने जो ॥ ते गुन गान करतें ॥ तो जे से स्व भो ॥ जन समान ॥ तो वा को प्र मु ह्य नि
 दन करतें ॥ अंगो कार न ही करत ॥ तो महा प्रसाद न होय ॥ प्रसादे तो भई ॥ अपने
 उरु को ई जे से भै ॥ तो अधरा भूत प्रभु को नही ॥ सो कल्पत बानी ॥ सो कक्षा
 पादि ॥ नास होय ॥ कष्ट अ लो कि की सिद्ध होय ॥ परंतु कृतार्थ न होय ॥ ता को उष्टि मा
 र्ग को फल न होय ॥ तो इ गुन गान करने ॥ या प्रकार ५ स्नोक को अर्थ भयो ॥ अ व और
 कहते हैं ॥ श्लोक ॥ उरा गाने सुसा कर्षि गो वि रस्य व्रजापते ॥ पथ तथा उासि
 नां नैवात्म क निवृत्तो न्यतः ॥ ६ ॥ या को अर्थ ॥ अ व वारी से देह कलेहें जो तु म भ
 गवद्दे कृत गुण गाने ॥ नाई कर के भगवद् प्रास धनार्थ ॥ और गुन गाने तो निराध
 रू सिध व तापो ॥ और वेद पुरा न मे अ ने कथ भि करे ॥ और फल ह करे ॥ और
 उरुय जान करे ॥ जामे सर्व बसु को ब्रह्म रूप जाने ॥ जो न भेद नही ॥ जो कर
 के मुक्ति होत है ॥ और तु म तो करे भगवद्दे की वानी गुण गान करे ॥ कल्पित वानी
 को गुन गान न करे ॥ यह भेदा भेद व ताये ॥ ता क के मुक्ति के से राय गो ॥ और श्री
 ठाकुर जी के को पे सव पदा धी है ॥ तो सब भगवद्पदा धी है ॥ भगवद्पदा धी ॥ ऐसे सब
 वेद पुरा न मे करे करे ॥ तो सब वेदी त सो जान को ॥ पर जो व गुन गान करे

॥ निरं ॥ सोलाकरके श्रीठाकुरजीको प्राप्त होयगे ॥ यह ते हेर कोरि करे तरो करतरो ॥ जोपर
॥ १८७ ॥ ज्ञान तो साध करे ॥ योमं स्वामी सेवकको नातो हो सव नास होत रो ॥ कोरते सख
 स्वल वन जंगम सब ब्रल करे ॥ श्रीपरुहको ब्रल करे ॥ तव तो भक्ति मार्ग में गयो
 कोरते यह श्रीरि भैतिक में वैराह स्वरूप ॥ श्रीपरुहको उषे तम में नार न स्यते
 तोकरतहं एक तो श्रीरि भैतिक ॥ एक श्रीरि भैतिक ॥ एक अध्यात्मक ॥ सोकोन भक्त
 सो कहतेहं ॥ श्रीरि भैतिक को सो तो साक्षात् पूर्ण पुषेति म ॥ सो भक्ति मार्ग में सेव्यते
 श्री अध्यात्मक जो अस्वरूप ॥ जोको ज्ञान उपासन करतरो ॥ सो ज्ञानी के सेव्य
 श्रीरि भैतिक वैराह स्वरूप जो सव दुख समान रो ॥ सो सव लौकिक संसारिक
 सेव्यते ॥ ताते जो सर्वत्र ब्रल से सो भावना करतहं ॥ सो तो अक्षर में लीन होतरो
 उनको पूर्ण पुषेति मको प्राप्त भई ॥ भक्तिरसकी प्राप्ति को अनुभव नही होतरो
 न हो स्वामी हासको संवंध नही ॥ ताते भक्ति मार्ग को विरोधी जानते ॥ श्रीरि
 में कर्म करेहं ताकारके वेदलो ककी प्राप्त होतहं ॥ श्रीरि जो कोरि निहारे देह में क
 मे कोरो ॥ तापछे वरकर्मको फल श्रीठाकुरजीको अपने करे देय ॥ पाछे भक्ति म
 गी में रुचि राखे ॥ तव कोरि काल में जब पुषे मार्ग में अनन्य करे ॥ ताको भग
 वद संवंध प्राप्त न करे ॥ ताते या प्रकार जो किक अलौकिक मपीदाको ज्ञान से
 जो श्रीठाकुरजी पुषेति म सो विराज न रो ॥ सो तो साक्षात् पूर्ण पुषेति म रो ॥ श्रीरि
 अक्षर सवदोर व्यापक हे ॥ जो जाको ब्रल करतहं ॥ श्रीरि परवैराह स्वरूप हे ॥
 सो परतव ब्रलो उ रो ॥ ता में परत जो ॥ जो पर भगवद सता ते हे ॥ तोत कारको
 उरब नही रो ॥ जो व मात्र परदयारो ॥ श्रीरि से वा पूर्ण पुषेति मको करे ॥ जो तम
 वै ब्रलो उ सम तुष्ट रोयो ॥ मूल तो श्रीठाकुरजीको ज्ञान तो ॥ श्रीरि मन पूर्ण पुषे
 तम में राखे ॥ श्रीरि भगवद रो ॥ सो श्रीठाकुरजीके मिक उ वानी करे ॥ तिनको
 कृत्य जो गुने रो ॥ श्रीरि मन में अत्यंत सुख पाके अने इसो करे ॥ कोसे गुण
 न करे ॥ जहां तारि निरोध सिध होयो ॥ जहां तारि मन ल गायके करे ॥ श्रीरि ज वी
 रोध सिध होयो ॥ तव आपरो गुणगान करे ॥ तव वाको मज कह नही जापगे
 सवोत्मक भाव सिध होयो ॥ कोरते भगवदो वानो कृत जो ॥ गुणगान श्री
 ठाकुरजीको वरत हो प्रिय रो ॥ कोरते गोविंद जो ॥ गोना मत था श्रीगोकुल के व
 ज भक्त तिनको रंइ से से जो गे बिंदे ॥ तिनको ब्रजभक्तन के लीला सख

जो गुणगान रो ॥ सो अस्पेत प्राये ॥ कोरते ब्रजभक्त श्री ठाकुरजीको आत्मा रो ॥
 तोने पर करे ॥ गुणगान सुखा बधि गोविंद स्य प्रजापते ॥ तान पुषे भागीव गवरी विना
 जो अस्पेत गुणगान कारतेहं ॥ सो अलपी मध्य भाषणा करत रो ॥ श्रीरि आत्मा ज्ञान रो
 न हा कोरि करे ॥ जोपर नुम अपने मन होत करत रो ॥ जो गुणगान अक्षर रो ॥ श्रीरि तो वर
 त भगवदो आत्मा ज्ञान होने कृतार्थ भये रो ॥ तरो करत रो ॥ जो श्रीशुके देव जी सोके
 ब्रलानंद में मगदने ॥ प्रथम आत्मा ज्ञान सिद्ध भयो ॥ सो व्याख्या स जो वक्ष्ये में प्रथम
 कर उतर दीयो ॥ सो श्रीशुके देव जी ने श्री भगवत ॥ श्रीठाकुर जीको लीलाको सुनत रो
 उर ब्रलानंदको सुखनुचन गयो ॥ सो छोरि व्यास जो पास आरके ॥ श्री भगवत सुन
 तव भगवदो लारस में मग भये ॥ ताते आत्मज्ञान ते गुणगान अधि करत रो ॥ ताते
 आत्मज्ञान कूट गयो ॥ जो ज्ञानको साधन करत रो ॥ जो अत्यंत दुर्लभ रो ॥ सो अयो
 योमं कहा कह रो ॥ सो जो सुखको लीन गोपे ते होत रो ॥ सुके देव जीको ज्ञान में सो सुख
 स्व प्राप्त रो ॥ ताते कोरि काठ ज्ञानको वेदके कर्मकोरि करे ॥ पर भगवद गुण
 गान समान श्रीरि सुख ना रो ॥ या प्रकार इच्छोकको अर्थ भयो ॥ प्रव श्रीरि करत रो ॥
॥ श्लोक ॥ हिरण्यमानान्जानान्दृष्टारूपायुक्तोयद्युभवेत् ॥ तदपि सर्वसदानंददृष्ट
 स्थं निर्गतं वारो ॥ १७ ॥ **॥ याको अर्थ ॥** अथवा श्रेको अस्का तोय रो ॥ सो अक्षेके भो लोपे
 करत रो ॥ से से श्रीठाकुरजी ज्ञान रूप पुक्त होत रो ॥ वे आधुनी जीव के हे दे में पधाते रो
 तव भगवदो होत रो ॥ सो भगवान के रो ॥ सो श्रीठाकुरजी तो नो काल विषे अनंद
 स्वरो ॥ तव सामर्थ्य युक्त रो ॥ सो अव दृष्ट में पधारो ॥ तव सव दुख दूर होत रो ॥
 ताके दृष्ट करत रो ॥ जरो तारि जीव निज पुषेति मानत रो ॥ तहां तारि श्रीठाकुर
 जी हे दे में नही अक्षरत सो करत रो ॥ सो श्री भगवद गोता में गजे के मोक्ष प्रसंग में
 जो मजरा जता में दस हजार हस्तो को वलहत रो ॥ ताको घाते न पकरो ॥ जब गज हासो
 परंतु छो आन रो ॥ श्रीरि याके साथे जो गज तिनने कृत जतन को ॥ तव सुभापक
 रो ॥ चले गये ॥ तव गज को अ भिमान गयो ॥ सव ते निरास हो ॥ श्रीठाकुरजीको र
 स्मरी को ॥ जो अक्षर में रो ॥ या प्रकार अनन्य रो ॥ श्रीठाकुरजीको प्रार्थना
 कीनी ॥ सो श्रीठाकुरजी तत्काल शुरु सवार रो ॥ वैकुण्ठे पधारो ॥ जब गह्वको अति
 हेर वरुत पासन पधो ॥ सो मोक्ष करत भये ना मयार ते कुरयो ॥ भगवान से सहाते रो
 श्रीरि गजे दू तो अपने धार दे के लोपे स्मरी कोयो ॥ श्रीरि पुषेति भागी भगवदो तो श्री

निरो- ठाकुरजी के मिलेवकों दुख करतहें। तहांतो कखू लौकिक काम नहीहें। ताते इहां लख्ता
 २६५। ल गुन पावतहें। तव ईस सखी ठाकुर जी डर करतहें। अपन जनको ल्हे सखी ठाकुर जी
 ल्हे देव सकन। तहां कोई सहेस करे। जो ल्हेस संसार में अपने कजीव पावतहें। और
 वैम्य दह पावतहें। परखी ठाकुर जी काह कहदय में नहां आवत। या प्रकार कारिके
 करा करतहें। जो संसार लौकिक संवंध कर दुख पावतहें। परखी ठाकुर जी को निमित्त
 दुख नाही होतहें। कोरि को स्त्री पुत्रादिक कर कोरि को बच न अपि मा न कर दुख पा
 तहें। या प्रकार संसार को दुख होतहें। और वै धमवकों सेगादिक दुख होतहें। कोरि को
 उद्धार निमित्त डरव होतहें। परंतु जो दुख करतहें सो अपने अर्थ कर नहें। तो भि श्री ठाकुर
 र जी प्रसन्न नहां होत। अपन वा वै धमवको दुख डर करतहें। ताते नै उष्टि मार्ग को फ
 ल नही होत। कोरि नै श्री ठाकुर जी को अभय। और यजीवको दुख डर भयो। सो
 यह पुष्टि मार्ग को रीत नाहीं। सो उष्टि मार्ग को करा रोतहें। जो अपन दुख पाके अपि
 का जो को सुखेदहें। जो यह वि चो। जो अपि आचार्य जी कृत पुष्टि मार्ग में भे भो अपि
 कार भयो। परंतु उष्टि मार्ग को रीत सो सेवा नहां वनी। ताते गुन गान कर सेवा धिया
 विचार कर जो सहजे में येन। अप्रप सुहना सो प्राप्त होइ। सो श्री ठाकुर जी को कर्तन
 भाव सिद्ध अपि। सो अपि आचार्य जी मता प्रभू अपन कहें हें। जो श्री ठाकुर जी तो तव
 अंगे। जब आचार्य पाना नाना रसी कखू रोव सु होइ। जो नाना प्रकार को सामग्री तें
 और सुध नहीं। तो अंगे कर्तन करे। और जो मुष्टि चना सापत्र सुधे। तो प्रसन्न ना
 ते अंगे। और विना भोग धरे तो मानसी करे। तो सिध नहीं होइ। श्री ठाकुर जी को
 अमविचार भोग धरे। और अत्यंत क्लेश सो गुन गान करे। सो श्री ठाकुर जी अपन
 जनको ल्हेस देवके। कृपा कर के वा भगव हो कहें मे र धो। सो कसे हें। भगवान
 साक्षात परमानंद रूप हें। सो ल्हेस श्री ठाकुर जी हरे में आय सब क्लेश डर करतहें
 सो प्रकार अंगे कर्ततहें। सो क्लेश। सबी न ह मय त्याप कृपा न ह सु सुलभ। ह ह त स्व
 रान सुत्या। प्रणीता वप नै जनान। याको अर्थ। अथवा ही को आसकारे। जो भ
 ने लौकिक क केलीयं प्रार्थना करे। तथो वैदिक क मोदिक क लीयें प्रार्थना करे। साया
 ध करे। पर जो श्री ठाकुर जी के मिलेवके लीये। अतु भवके लीयें प्रार्थना हें सकें
 प्रभू की मिलेवकों अंगे वरें वरें भगव होन साधन को पें। और सहा तुम करे। जो
 अपने उद्धारार्थ। प्रभू के मिलेवके अर्थ प्रार्थना करे। श्री ठाकुर जी तवके अपने ह ह तो

कष्ट के दता नही। सो वै धमवकों अपने अपने अंगे तें होयें। अथव देहिये। ताते तु
 अपि पुष्टि मार्ग में अधिक सुख करारो। पर संदेर करे तहां कह नहें। जो श्री ठाकुर
 जी तो सहा सबी नदहें। सो अंगे भगव होन में अपने उद्धारार्थ श्री ठाकुर जी को भजन
 को पें। पर श्री ठाकुर जी के सुखार्थ नहां को पें। ताते श्री ठाकुर जी सबके डर में विराज
 तहें। सो मयोदा मार्ग न को भजन साधन करत देव। संसार हाव तो भिदोय मुक्ति
 दीये तथा मयोदा मार्ग में संसे भक्त हें। जो मुक्ति को न लोये। भिनको भक्ति ही ना
 हें में उष्टि मार्ग भीत नहीये। कोरि को सापुज्य। कोरि को आपुस सामर्थ हीये पंतु
 व्यापे बे कुंठ को प्राप्ति नही। ब्रज में जोगीपी जन में भक्ति करीहें। सो सब तें उन मोत प्र
 उष्टि भक्ति। जो श्री ठाकुर जी को सुख देवके। अपनो निहा वेद पुरान लौकिक में भरे
 परंतु श्री ठाकुर जी के सुखार्थ ही कार्य करे। तव श्री ठाकुर जी तो सर्वानंद रूप हें। तो सो क्ल
 षणद अति दुख भेद सो होत भयो। तव कृपा न द होइ के कता को पें। उन ब्रज भक्तन के उ
 में विराज में उगा को गान सुनत भये। सो भक्तन को गान सुन पू री प्रेम कर जैसे नव
 नीत अश्री के संपंधत इवी भूत होइ। तें सही श्री ठाकुर जी अत्यंत प्रेम भाइयो भूत
 होइ। ब्रज भक्तन को प्रणीत नहीये। रसा नु भवकारोय। तो यह श्री आचार्य जी नहा प्रभ
 कर प्रगट भयो। जो उष्टि मार्ग उन री ब्रज भक्तन के भाव को सेवा हें। बा में निज सुख
 मान सेवा करे। ताको फल होइ। सो जव वै धमव उष्टि मार्ग में प्रवर्त भवो। तव वर प्रेम
 सो श्री ठाकुर जी के ली ला गुन गान कर कहतहें। तव श्री ठाकुर जी कृपा न द होतहें
 सो के से होतहें। सो कहतहें। जो हृष्ट्य में तो श्री ठाकुर जी वै हें। सो उष्टि मार्ग भगव
 दोन के वात्सल्य तें सेवा गुन गान को आनंद सुन के। पू री प्रेम के वस होय। जें तें ब्रज
 भक्तन के जस प्रसन्न होतहें। इवो भूल होइ अपने रसको अनुभव करावतहें। तो याप
 ष्टि मार्ग के सम को उका मागे नहीहें। और ये फल का प्रप्ति नही। या प्रकार उष्टो क
 को अर्थ भयो। अंगे अंगे कर्ततहें। सो क्लेश। नम्प्रात्सव पत्रे ल्यज्य निरु हें सबेद गणा
 सदानंद परे जे या साचेदानं दता सुता। पि। याको अर्थ। अथव हां कोरि सदे कर
 जो श्री ठाकुर जी भक्तन को गुन गान सुन के कृपा न द को होतहें। कखू ज्ञान को साधन
 नहीहें। सो अक्ले गुन गान में कटा छवत। या प्रकार कोरि करे। तहां कहतहें। जो वै स
 व को परे त्याग करके निरोध सहीत सबेदासव कार्य विषे। सो सम में कु गुन गान का
 तहें। सबको गीत्याग करे। बहा अलौकिक वैदिक को छोडो नहीहें। वै लौकिक वै

निरोध ॥ दिव को भगवत्संबंध धर्म विना जाने नश्री ॥ तोवर भू हो जाय ॥ तो कौन प्रकार
 ॥ १३३ ॥ सो उपाय छै ॥ प्रथमो श्री आचार्य जी द्वारा नया उनक कुन द्वारा वत्स संबंध कर
 तोताम लौकिक वैदिक देह संबंधो पदा धि प्रारा देह इहे आदि श्री गुरु जी को साम
 पिया करे ॥ नामे अपनी सतान राखे ॥ प्रथम तो ऐसे न्याग करे ॥ पात्र मुख्य ॥ जो सब प
 दा धर्म भगवान के दे ॥ सो भगवान के देखे पाछे करा करे सो कहत रहे ॥ उरागान को
 सम प समको लोला को ॥ मे गला अंगार से न पये न सम सम को गान करे ॥ ध्येना
 र मे जो लोला को सम करे ॥ तथा मान गि कवन लीला को भावना कर गुण गान करे ॥ न
 व निरोध हो होय ॥ तब व सन उत्त न होय ॥ पाछे थार अ वस्था होय जो सप्त नद रूप भग
 वान के अ न ह मे म न होय गुन गान करे ॥ तब वा जीव को लौकिक वैदिक का ह की मु
 ति न रहे ॥ कारे लौकिक सक्ति छट के भगवत् सक्ति भरी ॥ तब लौकिक ने छे
 तां मे होय न होय ॥ सो न व सर्व प्रकार सो भगवान मे आसक्त भयो ॥ न व सर्व प्रकार
 श्री गुरु जी वा को सा का लते ॥ पर वेद मे करे ॥ जो अपने वेद को धर्म छे ॥ ता
 को ब्रह्म वेद ॥ सो हो सते भक्ति सिध न होय ॥ न हो श्री आचार्य जी करत रहे ॥ अपने
 सक्त्त को जो उपन भगवद पर होय ॥ लौकिक वैदिक सब छोड भगवद सेवा गुन गान
 ने मन को प्रवक्त कर करे ॥ सो लौकिक वैदिक तुम सो न वने गो ॥ सो नि होय लोपे
 लौकिक वैदिक करत रहे ॥ ताते तुम को वात को चिंता मत करे ॥ या प्रकार प्रिमाणी
 वैश्व को सेवा गुन गान सर्व का ल विषे कर नो ॥ ताते निरोध होय ॥ सो के से गुण गान
 करे ॥ जो प्रेम सीहन स्निग्ध धान को न मना हो नान वंधान ब होत रहे ॥ श्री सप्त
 द भगवान तिन मे नि होत रहे ॥ नामे लौकिक प्रीति का के लोपे क छू फल न होत रहे ॥ ताते
 निरोध सिद्ध न होय ॥ नाते सदा न ह जो नामे तत्पर होय ॥ तान वंधान न होय तो भ
 गवद वापन होय ॥ उन गान करे तो सी चिदा न ह जो भगवान पर उरा स पूरी ॥ तिन के
 समान होय जाय ॥ जे से सप्त नद भगवान हो ॥ जिन मे सबे कालो वये अ न ह रहत रहे
 ते से ही पा जीव को सबे काल विषे अ न ह रहे ॥ स सा को क छु सुख डख न ब्याप स
 वे काल भगवादा व से मन रहे ॥ या निरोध को फल ह साते ॥ नाते सदा न ह पा होय
 के गुन गान करे ॥ पर निरोध को प्रकार है ॥ या प्रकार न व को अ धि भयो ॥ अ व धि
 र व दत रहे ॥ **स्नाकट** ॥ अ ह निरोधो रोधेन निरोध प ह गत ॥ विरु हाना मुा धि पिनि
 रु हू व रा यामिने ॥ **१४** ॥ **या का अ धि** ॥ अ व र हो वा दो र व प स करे ॥ जो तुम जीव न के लो

प्रथम श्री गुरु जी मे निरोध सिद्ध होय व्रज भक्त को तकी प्राथित करे ॥ सो पा मे पर जो
 निये जो तुम के निरोध ना हो ॥ निरोध के सा सिद्ध होय गो ॥ कारे ल व्रज भक्त को ज व मे
 रोध भयो ॥ ते से हो भगवान सद्र स नामे गुन गान करे ॥ तिन को निरोध सिध होय तोति
 होय निरोध सिद्ध भयो होय तो तुम हो होय को र ॥ उ मा दो सि सा प्रकार चले तो निरोध
 सिध होय ॥ या प्रकार को र संदेह करे त रा करत रहे ॥ जो ह मो तो निरोध होय चुको र
 सो को न प्रकार नि रो ध सिध कीयो ॥ सो व्रज भक्त श्री गुरु जी समान न होय ॥ श्री नि
 रो ध करन लो ॥ ते से हो त भारो निरोध सिध भयो हो ॥ मे ह निरोध को पद वी को पा र
 चुको ॥ सो जे से भगवान भक्त न को निरोध करे वी को साम धे र ॥ ते से रो साम धि र म् कू र
 ताते जा प्रकार व्रज भक्त न को श्री गुरु जी अंगी कर करे ॥ तति प्रकार श्री गुरु जी
 त भारो अंगी कर करे ॥ ताते ह म नि रो ध को प्रकार अपने भक्त नो विये वान न कत रहे
 हो जो त भार भक्त रहे ॥ त भारो अज्ञा प्रमान चले गो ॥ तिन को निरोध सिद्ध होय गो
 ताते ह म तो निरोध की पद वी पा र चुके ॥ अ व अधुनी फ जो जी वरे ॥ सो लया क
 अ धि कार का अपने स्वरूप को भू न गये ॥ सो उन को तो श्री गुरु जी के विष्टो
 को ते परे ॥ श्री उन को अ लौ किक सुख को अ नु भ वरे ॥ ताते वै लौ किक सुख इ व
 अ नु भ व करत रहे ॥ ताते ना जीव पे श्री गुरु जी को ह्म पा रो ॥ सो जीव नो निरोध
 के सा धन मे प्रवत होय गो ॥ श्री जा जीव को अंगी करान करे ॥ श्री गुरु जी को
 सो जीव निरोध के सा धन मे न ही प्रवत होय ॥ ताते जो जीव श्री गुरु जी के ह
 पा पा चर ॥ नि न के लोपे मे निरोध को प्रकार करत रहे ॥ श्री उन रो के मन मे वदु
 तने अ होय गो ॥ श्री जो अ सु र ज वरे ॥ तिन को श्री गुरु जी अंगी कर करे न ही
 तिन को तो निरोध को प्रकार ॥ क र चित कार के संगत मुने ॥ पर तुम के मन को
 तो भावे न रहे ॥ कारे न नता वगे ॥ उन को तो श्री गुरु जी ने लौ किक सक्ति ल गार ॥
 सो उन को अ विद्या का के लौ किक सक्ति मे वदुत हो मन जाये गो ॥ अ ह निरोध अ धि
 कार विना सिध न होय गो ॥ व्रज मे श्री गुरु जी प्रगट भये ॥ सो सब जीव न के नि
 रो ध सिद्धा थि श्री गुरु जी ने भरी न रहे ॥ जो द स्म स्क्ध सगे नि रो ध को है ॥
 सो व्रज मे व्रज भक्त र तन हो ॥ राक्षस ह रहत रहे ॥ सो व्रज भक्त न सब को निरोध सिधोय
 उन को स्नेह वदुत व करे ॥ कारे ॥ उन को भगवान अंगी कर विचार कीयो ॥ सो व्रज मे
 रास सार ल ॥ तिन के उर के विषे तो भगवान सो ह सब वयो ॥ कारे ॥ उन के भक्ति भो मे

॥ १८ ॥ अंगिका नरिका नो रतो ॥ ते सं ३२ हां पुष्टि मार्ग में जीवको अंगीकार काले ॥ सास
यह निरोधको प्रकार ॥ म कूप फल जानो ॥ सो तिनके मन में निरोध होय ॥ उनको जो
किका साते सिद्ध होय ॥ अवनिरुपन करे ॥ ऐसे १० स्तोत्रको अर्थ भयो ॥ अवनिरुपन
स्तोत्र ॥ हमलाये विनिमुक्ता स्तमगना भवसागे ॥ परितरुहास्त सबाधनादमायात्परनि
अवकहतें ॥ जो श्री व श्री ठाकुर जो अंगीकारको विचार नारीकीये ॥ वृद्धको परपुष्टि
प्राये अंगीये ॥ और अ न स्यता दृढ़ होय निरोध प्राप्त भये ॥ अपने स्वरूपको श्री ठाकुर
रजीको स्वरूप जाने ॥ अमु रजी बहते ॥ तिनतो ये पुष्टि मार्ग प्रगट हो ॥ ताको महात्म्य
स्वत हो ॥ परंतु उनको संगत नारी ॥ उनको हेसही कातेहें ॥ विमसा समुद्र में अज्ञान सो
विरह में रहतें ॥ तिनको श्री ठाकुर जो न्याय कीयेते ॥ परतहार जानो ॥ उनको कष्ट सु
हाप नारी ॥ जैसे देवीको भगवद्द्वारा विना कष्ट न मुहाय ॥ पा प्रकार है वो अमु रीमे ता
नस्यते ॥ १५ ॥ अवनिरुपन करे ॥ **स्तोत्र** ॥ गुरुस्वा विष्ट चिताना सर्वदा सुर वैरिणा ॥ सा
रविष्ट लेशो न स्थाना ही वस्तु ॥ **भाषाको अर्थ** ॥ तहां वही से ई को ॥ जो जीको अ
नेक जन्मके प्रतिबंधते ॥ और अनेक जन्मसो विषय करत आयोते ॥ सो एक श्री ठा
कुर जोके गुनगानने निरोध होय ॥ साधन करके पापता छिन भयो नारी ॥ सो पापता
प्रतिबंधको तोरगे ॥ तव पाको कते भगवद् प्राप्त होय ॥ और अनेक जीव गुनग
वतें ॥ तिनको भगवद् प्राप्त होत नारी ॥ पा प्रकार कोई कते नती कहतें ॥ जो गुणानो
सब जीव श्री ठाकुर जोके गहतें ॥ परंतु गुनमें निविष्ट नारी होत ॥ गुनको हते कहिये
श्री ठाकुर जोके लीला में मन प्रवेश करके गावेनो ॥ श्री ठाकुर जो प्रसन्न होय ॥ जैसे
व श्री ठाकुर जो चारनको पथ ॥ जघर में श्री ठाकुर जोके लीला ताको समर्पन
कीयो ॥ रावको ज ब्रज भक्तनको सयोग भयो ॥ तव अंतरंग सरवा जो ॥ सो रावको स
व अपने धरमें लीलाको अनुभव करके गुनगानकोये ॥ जैसे ही पा पुष्टि मार्ग में बैसा
गुनगानको ॥ और समकी लीलाको विचार ॥ भावसो गुनगानको ॥ कहरको क
बूनको ॥ जैसे करनो ॥ सब समकी लीलाके गुनगानको ॥ सोके सते ॥ भगवान् सुरदे
व्यके मारन वोर ॥ सोइ रां मुरारपुको कर ॥ तहां कहतें ॥ जैसे नवका मुरकेइ रां सोस ह
जार कन्या सोभा ॥ तिनको प्रतिबंध ॥ जो पाप सो मुरदेव्यहता ॥ नवका मुरकेसमान
वल अदेव्यहता ॥ सोसाताकेटि कोचकी मुरदेव्यकीहती ॥ सोजलात्मककारे मुर
देव्य रहत हता ॥ सोभक्तकी अतिदेव्यके श्री ठाकुर जो सत्यनामाको संगलेनरका

सुरके ऊपचंदे ॥ सो भगवान् मुरदेव्य नरकासुरको पाप ॥ सो परतजार भक्तनको घर
लार अंगीकारकोये ॥ जैसे ३२ हां पुष्टि मार्ग जीवै स्वबेरी ॥ जव भगवानकी लीला
में मन प्रवेश कर गुनगान कोये ॥ तव जैसे मुरदेव्यको मार ॥ इतरजार कन्या निज
भक्तनको अंगीकारकोये ॥ ते सं ३२ हां पुष्टि मार्ग भक्त जो ॥ सो ज ब गुनगान
के ॥ सो जैसे मुरदेव्यको मार ॥ इतरजार कन्या नको अंगीकारकोये ॥ उनके सय प्रति
बंध करे ॥ जैसे ही पुष्टि मार्ग वैभव अनेक पाप रूप प्रतिबंध ॥ तिनको निरोध मि
द्धको ॥ सर्व अ उनको अंगीकार करे ॥ ताने भगवानके ताने अनेक नारी ॥ परंतु प
हे मुगे वैला ॥ पाके लिये करे ॥ सो परजता देवको यात्रका ॥ नाप करार देव रूप
को ॥ भक्तनको संसार दुख कष्ट न बोरोगे ॥ पर पाप रूप प्रतिबंध ॥ तिनको श्री
ठाकुर जो दृष्टमें प्रवेश करे ॥ सब दूर करे ॥ काहेने ॥ अपने लीला जीवके दृष्ट
में ही सो मुनके परम आनंद पावतें ॥ ताते वैभवको पती भावकाके भगवद् वि
निपोगार्थ भगवानके प्रसन्नार्थ मान कतेयते ॥ उनके सुनाये को गुनगानको
साजव भगवान पाप प्रसन्न होय ॥ तव पा जीवको कताइ साहोरी सो कहत
हें ॥ जो नाप लेशो दुस्व सुख कष्ट वा ध्यान करे ॥ जैसे भगवान राखनेहें सयते
न्यारे ते सपे ॥ जीव दृष्टी वत सुधी होय ॥ और ही सवै दूर रहती ॥ तव जीव स
वके दुखको होये ॥ तामें आप सुधी होय ॥ तामें कता कहने ॥ पर भगवद् गुनगान र
सो ॥ जो निष्काम होय श्री ठाकुर जोके लीला में मन लगाय गुनगानको ॥ तारे
ले सुरवाये ॥ हीरे समान अतृप्त होय जाय ॥ पा प्रकार १२ स्तोत्रको अर्थ भयो ॥ अवन
रुप करतें ॥ **स्तोत्र** ॥ तदा भवेद्दया लु त्वामन्म या चूर तापना बाधसकापे
नास्तत्र दृष्ट्यो सोपेसिध्यति ॥ ३॥ **याको अर्थ** ॥ अवनरो करे ॥ जो प जीव श्री
ठाकुर जोके लीलाको गुनगान करे ॥ ते ही हो जाय ॥ जैसे ही सुखीहें तारे प्रकार
जीव होय जाय ॥ जो पर अपने समान या जीवको देवके बहुत प्रसन्न होय ॥ तव
रूपा दृष्ट्यो पाप चूर दृष्ट्यो रह होय ॥ तहां कहतें ॥ पर प्रसिद्ध होसते
जो कोरे योगी जाते ॥ नाको दृष्ट क बहकेई नको ॥ तव बरता जीवहुत प्रसन्न
होरेके गोमयाको देय ॥ नव वरहुत वडि जाय ॥ पाछें वृत्त वृत्त बारा जोकी
रूपा दृष्ट्यो वाकी नरे ॥ दृष्ट्यो ॥ जो पर मेरो वीकी पोरे ॥ तव बरता जो किने
नारी ॥ अपने सामर्थ्य बरा जो ॥ जैसे ३२ हां जीव भगवानकी लीला गहत गाव

निनेरे ॥ भगवानसे रोने हैं ॥ न च तो भगवान की चूर दृष्ट होत हो गे ॥ तब भगवान सरी को जीव
 १२५ ॥ होइ स्मरणा को कर न हो गे ॥ पा प्रकार जव विरोध भयो ॥ तब जीव को कता गति होत
 हो गे ॥ तरो कर न हें ॥ जो श्री ठाकुर जी परम दयाल हें ॥ पर दया भाव तो लौकिक कर ज्ञान पर
 और भगवान में यरुध मन होत हें ॥ कोलेन जब जीव भगवान की लीला को गुन गान कर
 रत करत भगवान सम होत हें ॥ तब या जीव का भाव और तृष्ट हो गे ॥ रंच करत न वेरत
 व्यसन अवस्था हो जाय गे ॥ कोहेते वरु जीव को पह जो अध्यास जो लौकिक नासत होत
 भगवदासक्ति भगवदविषे अध्यास हो जाइ गे ॥ कोहेते ये सी अध्यास कर भगवान वि
 वेंन कर नो ॥ भगवान तो अपने भक्तन के ऊपर सदा प्रसन्न रहत हें ॥ सो ब्रज भक्त ज्यो
 ज्यो भगवान को प्रसन्न होत हेरु तहें ॥ ज्यो ज्यो विसस भाव श्री ठाकुर जी में होत हेरु ॥ तो
 ने भगवान को परम दयाल जान के स्मरणा कर नो ॥ और हेरा अध्यास को छोड़ के भगव
 दाध्यास होत ॥ ऐसी आसक्ति सो सेवा कर नो ॥ पा प्रकार १३ स्तोत्र को अध्यास भयो ॥
 अव और करत हें ॥ स्तोत्र ॥ संसार विघ्न हरणं बुद्धिदान हीता इव ॥ क्लम सविनसु
 ज्ञो धुम सिस्य यो ॥ १४ ॥ पा को अध्यास ॥ इंदो बहि मुव न होत ॥ या प्रकार अपने अध्यास
 ज इंदो न को दुब भाव छुगया ॥ श्री क्लम में लोव ॥ सब बलु में श्री ठाकुर जी को न क्लम
 जाभनो ॥ श्री क्लम प्रतीमा वि कहित कर न वारे हें ॥ जिन को प्राग लोव ॥ कोहेते ॥ श्री
 अवतार ले तो विषय को छुगइ के ॥ अति की लन देस को के उदर होत ॥ इन की लीला
 कैसी हे ॥ जो स्नेस न होत ॥ सो श्री क्लम जी के लीला देरु के व्यवव तु छ लागे ॥
 तब वही लीला मुने के जो सुक देव जी समझे हे ॥ निन हे के मन आकर्मन करत हें ॥ तो
 और जीव को कहा कहिये ॥ तनु देवो जीव चहि ये ॥ अमु जीव को मन श्री क्लम
 की लीला आचरन कर ॥ जैसे और जो अवतार हे ॥ सो मर्यादा सी रहत हें ॥ सो वैदीन
 सो सिद्धा देत हें ॥ जो विषय तेन के होत हे ॥ और अध्यास कम मोक्ष देत हें ॥ तब उन जी
 वन को क्लम से रहत हे ॥ विषय नो छूट नहि ॥ और साधन छूट नहि ॥ तोते उनको
 उदर होत नो बहुर को हेत हे ॥ और श्री क्लम जी की लीला कहिन हें ॥ कैसी हे जो प्रती
 माच को सुख देत हे ॥ सो कहत हें ॥ जो के जीव समझे ॥ निन को मन पुब में चरुत हे
 अपने प्यता व तहें ॥ तकीर क्षाने न्यम होत हें ॥ ये सो वृत्त सी कहि हे ॥ तब श्री ठाकुर जी
 नाना प्रकार की लीला मुने ॥ तब सुख होत ॥ सो न क्लम ने अपने पुत्र को तेन न सी
 क सिद्ध ॥ श्री ठाकुर जी की वाल लीला लागे जाय ॥ तब लीला प्रतापने अपने बालक

को तुच्छ जानने ॥ जो उरो मन में अपने क अज्ञान को क्लम गाये ॥ तो अवही मर जाय
 तो इव अपने को ग सहित हें ॥ ऐसी ज्ञान हो जाय ॥ कोरे को विषय में मन होइ रासा
 द्विक लीला को सुन के लौकिक भाव होत ॥ तो वरु न के भेपे ॥ और वरु न जीव और
 जो बेलो किक ही में अपने मन को सुख मानव हें ॥ और किने राजा की वाती भे प्रस
 न्न होत ॥ तब वे श्री ठाकुर जी को जुद्ध सुनत हें ॥ जो जरा सिंध के प्रसंग में तहें श्री ठा
 कुर जी पधरे हें ॥ श्री वली एक जी सहित सब सेना सुद्ध करी हे ॥ श्री वली देव जी ही के ज
 एत ध को रथ ते पका मारन लीगे ॥ तब श्री ठाकुर जी ने करी जाया को अवही मार
 मत ॥ पा द्वारा वरु त दुष्ट न को मार नो हें ॥ पा प्रकार १७ वारु छुड की प ॥ महा भारथ
 भोष्पिता के समुख हाथ में लेके ॥ अलका वली छुगे हें ॥ अपर रथे उरु हीरे
 मरणा कान पाच लौकिक जुद्ध ज में उखाता होखे हे ॥ सो न क्लम मूल जाय ॥ ऐसी
 श्री क्लम की लीला हे ॥ सो सय के मन को र प्रावत हे ॥ पा प्रकार कोर जीव को स्नेस
 न होत ॥ और जीव को कल्पान होत ॥ इ सन्सय न को एवा हो ॥ कोले राजा की आजा
 ऊपर न होत ॥ जैसे प्रतापवान श्री क्लम हो ॥ तिन में तिन के मन दुष्ट जाय को विद्याम
 प्राइ हे ॥ सो जीव सर्वोत्तम पर होइ छुके ॥ तके भाग्य को पार नही ॥ ताको सव यमु में
 क्लम हो दृश्य मान होत हें ॥ पा प्रकार भगवान जो अलौकिक सासुप ॥ तिन के सव
 धते जीव हू को दृष्ट अ लौकिकता को प्राप्त होत हे ॥ और संसार विघ्न जीव हू को उ
 छ स्वभाव होत हे ॥ और इंदो न को होत हे ॥ ताने श्री क्लम ही ने धार वार विनियो
 ग कर नो ॥ पा प्रकार १४ स्तोत्र को अध्यास भयो ॥ अव अध्यास करत हें ॥ स्तोत्र ॥ भगवद
 धर्म साम ग्यीत विरोधे विषय अध्यास ॥ गुणो हीर सुय म्परी यदर वं भाति को ही चिन
 १५ ॥ पा को अध्यास ॥ अव वारि कहें ॥ जो तुम कहे श्री ठाकुर जी की लीला से सी हे ॥ जो इ
 न के विघ्न मन को रमावे ॥ और इंदो न को भगवद लीला में लगे वा ॥ तो श्री क्लम प्रस
 न्न होत ॥ इंदो न को रहित होत ॥ अ लौकिक होत ॥ मन को रहित होत ॥ जीव को भलो हो
 सो प्रती पुर्वात्तम की लीला तो दुसाध्य हे ॥ वे वरु जो सापथ वान आत्मा एमति
 न को पदवी पारके ॥ इ सादिक और खानी योगी ॥ निन के मन को तु हीरो तरी प्रसन्न
 होत हें ॥ जो पे तु छ काल काल के जीव बुद्धि कर के रहत ॥ तिन को मन इंदो भगवद
 लीला में कैसे विनियोग होत ॥ सो उन जीवन की बुद्धि मन श्री क्लम में लेगी
 श्री क्लम प्रसन्न होत ॥ तब रन को यो सब व्यथ हो जाय ॥ तब जीवन को क्लम वि

॥ निरः ॥ रेखीलघभये ॥ औररणी पुर्वेतिनकी जोली जाते ॥ तहां तो वेदह को मन न सी जाय ॥
॥ १२५ ॥ सकत ॥ उष्टिर्मागकी लीलाको फलनाशि जान ॥ चते गति नेति कहत है ॥ तो परसंग
रजितने वैदिक उपाय श्रीअकुरजी के रो ॥ सो सबवेदद्वारा प्रगटेते ॥ सो भगवदगीला
वेदहने अगम्यते ॥ ताते जीवकों प्राप्तेके संतोय ॥ सा प्रकारके र प्रसको नहां कहत है ॥
जो तुम करे सोसा च भगवदलीला अत्यंत गोप्य है ॥ चला शिवादि को प्रपिन नशि ॥ अ
नुभवनाशि ॥ कहते ॥ उनके साधनको बलते ॥ ताते भगवदलीला साधनकर अष्टादि
नाते ब्रह्माज्ञानी आदिकों उष्टिना लारसकी प्राप्ति नही ॥ परहगि प्रगटे श्रीअ
र्यजीने कीयोते ॥ तो याने साधनजी वक्तन नही है ॥ और उष्टि माग में जोसेवा उ
नगा नही ॥ सो भगवदही रूपाने सिध होय ॥ सो केवलसाधन नही ॥ फलस्वसाधन
और फलको कवल ध्यान योगमें है ॥ और सेवामें स्वफलरूप साधन होने से
गुनगान फलरूपमें सेवा गुनगान तावे परकेवलसाधन ही न जानने पर भगवद
धर्म है ॥ भगवानको रूपाने यह उष्टिधर्म सेवा गुनगान वाद ॥ यही धर्मको सामर्थ
जाने होय ॥ ऐसे श्रीआचार्यजीके उष्टि माग में स्थित होय ॥ ताके प्रभुके अ
हने लीलाको अनुभव होय ॥ तासे जो जीव ताके विषयें आदि लो कि वंसे सब
अपवैराग्य करके विषयको नासही करे ॥ कहते ॥ जेसा मध्य भाग जानमें है ॥ तो उ
नवादे है ॥ तेसेही भगवान अमुरनको अरि मनमें वैराग्य उपजाय ॥ भगवदीनकी
रक्षा करत है ॥ नहां कोई करे ॥ तो भगवद उन तो अनेक जीव गावने है ॥ और उनको
तो वैराग्य देवत नाहीं ॥ संसारके विषयमें लिपटारत है ॥ ऐसे हूं संसारमें है स्वत
स्वको नहां कहते है ॥ पर एही सुवस्वकी नृदुरां भाति कहि चित ॥ कहते ॥ भगवद
गुन तो गावते है ॥ भगवद पर नही है ॥ भगवद सुखाये नही भावन ॥ ताको फल
लौकिक अर्थ कर वर ॥ भगवद गुन ही को पसनाहीं करत ॥ तीर नाम नही सुनत
ताते या जीवकों हरिको सुवस्वकी नही लीते ॥ ताते यह जीव गुनगा वनह नौ किसरूप
पावते है ॥ और जो जीव भगवदसे वा गुनगान निष्काम होय के करे ॥ नोय धर्मती को
स्वकी करे ॥ और उरव पोय ॥ तब श्री गुरुजी रूपाने उष्टिके ॥ तो या जीवकों हरिकी लीला
को अनुभव होय ॥ नवपा जीवके लौकिक वैदिक दुषं चक न होय ॥ ताको हृदांत कहते है
साधारण औषधसो अरि रोग जाय ॥ तेसे ही जीव अनेक दुर्वासना कर दुष पावते है
सो भारी रोग है ॥ सो सकाम साधारण औषधने रोग न जाय ॥ जब निष्काम होय

नम्य सका अश्रयकर ॥ श्रीठाकुर जो प्रसन्न होय ॥ तब तीव्र औषध करस्व दुख जाय
जेसें काठकी अग्नि ते वेग भस्म होत नाहीं ॥ और अग्नि के पुंजेमें भस्म होय ॥ तेसे ही
जब निष्काम गुनगान करत श्रीठाकुरजी हृदयमें पधारें ॥ तो पाकों भगवद लीलाको
अनुभव होय ॥ नो या जीवको लौकिक सुवस्व प्रभुमें न होय ॥ सा प्रकार १५ श्लोक
को अर्थ भयो ॥ अथ और कहत है ॥ श्लोक ॥ स्वतन्त्रा ज्ञान मार्गी दुःख सो गुण व
गीने ॥ अमत्सरे र लब्धे अवरणी नीपा सुहा गुणां ॥ १६ ॥ पाको अर्थ अथ तैदेह के
जो तुम ऊपरको ॥ निष्काम होय भगवद गुनगान करे ॥ तो वाकों लौकिक सुवस्व प्र
न होय ॥ सो लौकिक सुव तो ज्ञान मार्गी ॥ विनहू को नही होत है ॥ जानी काह यह
दुख नही होत है ॥ नो पर ज्ञान मार्ग तिहो ॥ भक्ति मार्गमें से सो कर गान करे ॥ तहां क
हत है ॥ जो ज्ञान मार्गने साधन भाक्ते वोर जो असा बतार की भक्ति करत है ॥ ने अर्थ
कहे ॥ नो उष्टि मागो अधि कहे ॥ यो नं करत कहने ॥ तो तो दोर श्रीभागवत गीता
में वरीन है ॥ जो मोक्ष फल जानो को है ॥ जो भगवानके स्वस्वमें लीने होय ॥ सो को
दिनमें कारु को सिध न होय ॥ सो अमुरनको याग्य है ॥ भक्तके याग्य नही ॥ कोने
श्रीठाकुरजी प्रगटते पर हस मनको माया उक्ति है नही ॥ नामें नो उह जीवको नाम
होने है ॥ ताको कवह भक्तसको अनुभव नाहीं ॥ सो नु धरे ॥ कोने ॥ अमुरन
को विरोध श्रीठाकुरजी देते है ॥ और भक्त तो वाक्य चोहना हो ॥ और ठाकुरजी प्रगटे
जो भागे सो दूज ॥ पर तुभक्त कअलेन नही ॥ तो श्रीठाकुर जो प्रसन्न होय ॥ अमुरन
देते है ॥ अथ अथ भक्त वसरत है ॥ जो पंचाधारि में भगवान ब्रजभक्तने करे है
जो सुदोरी है ॥ मंतुम तो उगिन नाही ॥ सो नु मागे भक्ति समा न भेरे करे पदाथ नही
जो मंतुमको दूज ॥ ताते मंतुम दोरी नो है ॥ ऐसे आप कहे ॥ ए ज्ञान कर वप्रदोने है
साक्षान हो भक्त को उल्लेख जहां तहां वरन न है ॥ सो कहते है ॥ ज्ञान मार्गमें ज्ञानाति
नको बुधि परमात्मा में प्रवेश कर चुके ॥ अथने आत्म ज्ञानमें मग्न है ॥ सो जो स
द गुनगान करत है ॥ सो अधि कहे ॥ पावे कहां कहने ॥ सो आत्म ज्ञानमें शुकोल
जो बप्रदते है ॥ पर भुगवद पुन सुनत ही आत्म ज्ञान सुख लागे ॥ ताब तो भग
वद गुनगानमें मान होय गो ॥ ताते ज्ञान मार्गते भक्ति मार्गको उल्लेख अधि क
जानने ॥ तहां कोई कहे जो गुनगान देवता करत है ॥ तिनको नो मोक्ष हूं लीने है
सो गुनगानको से सो महात्म है ॥ नो उबदे बतानको भगवद प्राप्ति नही ॥ और देवता तो

॥ निरो ॥ पवित्र हैं ॥ तिनको गुनगाने कछु प्राप्त नाहीं ॥ तो भूलोके में गुनगाने कलिने के ॥
 ॥ १२६ ॥ भगवद् प्राप्त होयगो ॥ ऐसे कोइ कहे तहां कहत हैं ॥ अमस्ते लुट धै अवरगीनी पास
 हाउरा ॥ जो स्वर्ग लोक में देवता गुनगान गान करत हैं ॥ जो हमारो लोक कोइ अमु
 नलेइ ॥ सो ओ भगवत में वरन नहें ॥ जब अमु में उपद्रव होत है ॥ नयसये देवता मिल
 के भगवान पास जाय ॥ भगवान को स्तन करत हैं ॥ तब भगवान अमुन को मार के
 बतो न को अमुने लोक में स्थित करत हैं ॥ अपनी लीला को अमु भव नरी करायत है
 और मात्सप सहित हैं ॥ एकको उत्कर्ष ॥ एकको देवता नही देख सकत ॥ अमुने अ
 ने अतान अहंकार कर मात्सप सहित हैं ॥ ताते देवता नको भगवद् प्राप्त नाहीं ॥ ने
 हो जो जो वसकाम गुनगान करत हैं ॥ नाको भगवद् प्राप्त नाहीं ॥ और जो निष्काम
 गुनगान करे तो भगवद् प्राप्त सर्व आतोय ॥ पहिने अं जानने ॥ पद्यप जो वसकाम में प
 त्यो ॥ और कछु साधु नवासो नी होवनन ॥ और निष्काम होइ भगवद् गुनगान करत है
 तिन के समान उतम जीव कोइ नाई ॥ और जो मात्सपन अहंकार होइ ॥ और जो स्व
 ताहोप नहा देवता पूरे कनिष्ठा महोइ भगवद् गुनगान करे ॥ ताके ऊपर श्री ठाकुर जी
 श्री ठाकुर प्रसन्न होय ॥ और अहंकार तो उत्कर्षन सहि सके ॥ मन परवि चोरे ॥ जो गु
 नगान करत हैं ॥ सो मोसमान भक्ति काइ की नाहीं ॥ सो भक्त नते इत्येको ॥ और गु
 नगान वाको न सुहाय ॥ ऐसे जीव को भगवद् प्राप्त नाहीं ॥ और गुनगान को ऐसे महा
 त्मह ॥ जो भाव होय तो वह जीव को भाव उत्पन्न होय ॥ पाछे भाव सां गाव को ॥ तब
 श्री ठाकुर जी को लीला रस ताको अनुभव होय ॥ पा प्रकार आद्यु नीकनी वकोति
 रोध होय ॥ भगवद् लोला में प्राप्त होय ॥ ताते भगवद् गुनगान सर्व पर है ॥ १५ ॥ आक
 हार मूर्ति सदा धेया संकल्या दपिन इति ॥ हरी नं स्पशिनं स्पष्टं तथा स्मृतिगीतम् ॥
 १५ ॥ याका अर्थ ॥ अरको र्ध्वपक्ष करे ॥ जो वह तो सेवा करे गुनगान कहे ॥ सो दोउ
 न में कान को सोनि अं न भयो ॥ त्सां करत हैं ॥ हरि मूर्ति सदा धेय ॥ हरिको जो म
 ति है ॥ ताको ध्यान को ॥ ता में प्रथम सेव सिद्ध भई ॥ कारते श्री ठाकुर जी ध्यान में अं
 पह अत्यंत रुझि भरे ॥ ताको ध्यान करे ॥ फेरमान सो सेवा फल रूप के संसिद्ध होय ॥
 ताके लीये तनु जावित जावसेय ॥ श्री अा चोप जी आप प्रगट को येते ॥ जा में ना
 प्रकार की सोमिथी अंपनी सना की ॥ श्री ठाकुर जी विनियोग करे ॥ ता करके जीव को उ
 धिनि में होजाय ॥ पाछे महा प्रसादे वै स्ववनेइ ॥ ताकोइ ही मन सय भगवत परां

नव श्री ठाकुर जी को अनुभव होइ ॥ तब श्री ठाकुर जी प्रसन्न होइ ध्यान में आवे ॥ ता
 ते प्रथम तो वै स्ववको भगवद् सेवा करनी ॥ सो सो भाते सो को ॥ जो एकाइस इंडी
 नको गुनगान में आपगयो ॥ तो पा प्रकार को तो मान सो सेवा ॥ श्री ठाकुर जी सेवा
 जीव को नितो धतोय ॥ परंतु सकल फोनि अयात्प्रक कर सेवा करे नवीकल्प मन
 को ॥ सो कारते जब भगवद् सेवा करे ॥ तथा ध्यान को ॥ ताते लोकि के में मन मकत है
 नया अविस्वास होय ॥ तो में भगवत सेवा करत है ॥ सो श्री ठाकुर जी अंगोकार का त
 होरे के नहीं ॥ पा प्रकार वि कल्पना करे ॥ लोकि का सात्त होय ॥ भगवद् सेवा में यह
 विचारो करे ॥ जो फमानो का म करने ॥ ना करके सेवा में मनको उद्दोय ॥ जो सेवा
 सिधन होय ॥ और हरि की मूर्ति चरने पधारय सेवा को ॥ जेसे स्वस्वको मनो धे होइ
 ते सो स्वरूप पधारय सेवा भाव सो करे ॥ कारते ॥ इत्त वैवते ॥ पुण्य में श्री ठाकुर जी
 ब्रह्मा प्रति कते हैं ॥ जो मो को भजत है ॥ वह मो को बहुत प्रीयते ॥ पेरो भावना करत है
 तिन को पूरे स्वरूप को जान होय ॥ ता भावना सिध होय नाही ॥ जो ज्ञान मति में जाय
 पे ॥ महात्म विचारत विरतता को भक्ति होनी कठिन हो ॥ कारते ॥ और मी मूर्ति प
 धराय सेवा करत है ॥ तिन को वात्सल्य वेग प्रगट होत है ॥ कारते उन के मन में पर
 मनो धै रूपता परे ॥ जो उठाव नो है ॥ मंगला कर नीते ॥ श्री ठाकुर जी भूये है ॥ और उन
 को सवहाय सो कानो परत है ॥ तात यह श्री ठाकुर जी के वसते ॥ और मान सो सेवा ल
 तं च है ॥ मन में भई तब करी सो में प्रसन्न है ॥ जो जीव भवे वसते ॥ मो कार्य में रहे ॥ ति
 न के व स में रह ॥ यह करे ॥ ताते ही की मूर्ति स्थापन था गौर पधारय ॥ तनु जावि
 जा सर्व पर उष्टि मार्गोत सो करे ॥ वि कल्प को न्याग ॥ संकल्प जो नि अं श्री ठाकुर जी
 स सहित करे ॥ और इस नह करे ॥ कारते विशेष दर्शन ते श्री ठाकुर जी के सन्मुख
 परे ॥ सुख्य दोष वही जीव में है ॥ ताको नि वति होय ॥ और दर्शन करके स्वराह
 द्या छट होइ ॥ ताते जो ने चेतरी न हो ॥ तो जीव को तो दर्शन करत था ॥ मभु के समु
 यते तो दोष निवने होय ॥ और ने च वार को इगने ॥ ने वर ही भगवत्प्राप्त ॥ वरुष
 दोष निवति ॥ और ने च द्वारा भगवद् संध स्वरूप इदया वर होइ ॥ और स्पष्ट को
 से बा में अंग बलन था चरि स्पष्ट कर ॥ त्त को जब री दो सुध होय ॥ सो सेवा में तो
 कर्म इंडी को विनियोग होइ ॥ कारते चरणा विदने नीह में जाय ॥ हाथते स्पष्ट ने
 ने दर्शन हरय कर आलिंगन ॥ नास्किा कर प्रसार वस्तु ॥ रसना का महा प्रसादे इ

निरो ॥ न्यायिक कृत करके ॥ बाहिर की इदीन के विनियोग करने ॥ सोइस्य कर जो भाष
 ॥ १६० ॥ त्यहोइलही ॥ काहेते अनेक जन्मने ॥ दुरुत पापा दिक करके ॥ मलीन होइ रहते ॥ ताते
 निव्य विनियोग कोपेते ॥ गिछे आमुरवे महोद सोन होइ ॥ या प्रकार बाहिर की इदीन
 को विनियोग भयो ॥ सो अब भीतर की इदीन को विनियोग होइ ॥ सो कहते हैं ॥
 अथ गौकीर्तनं स्पष्टं पुत्रे क्लृप्त प्रियेति ॥ पापो मृत्नास त्यातेन सेषा भागे तै नो न संत
 १५ ॥ याकी अर्थ ॥ अब भीतर की इदीन प्रकार की है ॥ एक अमरा एक मन सो अथवा
 वर के स्वैक्रियान होय ॥ और मन करके बाहर कष्ट काम न हो ॥ और सुख मन
 को कपि है ॥ जो मन न हो ते कृत न हो वने ॥ और विना मनने को तो फल सिद्ध
 सो मनने को तो फल होय ॥ सो मन के विनियोग को उपाय करतें ॥ जो प्रथम तो अ
 न करे ॥ ताकरि मन को विनियोग होय ॥ काहेते मन को विनियोग होने तो बहुत कष्ट
 मन को तो निरोध श्री ठाकुर जी की कृपाते होय ॥ अन्याया न होय काहेते सब इदीसों
 सेवा करे ॥ और मन भगवद् सेवामें न होय ॥ तो सेवा सिद्ध न होय ॥ और मन भगवद्
 सेवामें होय तो ॥ तो उः श्री गुरु जी वाकी सेवा जोर ॥ और अवराने बुद्धि निमल हो
 कीर्तनते मन ही निरोध होय ॥ या प्रकार इदीन को भगवानमें विनियोग करने ॥ अ
 वहाव बंदे नहा पूर्व पक्ष ॥ जो उम सब इदीन को विनियोग करे ॥ ना ते दो इदीने ॥
 को विनियोग को न प्रकार होय ॥ केसे लंघी की इदीन के ॥ कपि है ॥ एक लंघी भा
 मनि कथ ॥ और रिषसों प्रलास करके मल को त्याग ॥ पर तो लौकिक राते सो को
 सो पहले लिंग प्रकार कहतें हैं ॥ जो इदर में कठरा विनते ॥ तो महा प्रसर की अ
 ने मिलके प्रवृत्त होतें ॥ सो जल पान सो निवृत्त होतें ॥ और तब बहरस सो सब
 देर में प्राप्त होतें ॥ सो देर मुह्य धन घोरे ॥ जो लंगीन करे तो सेवा में बाध करे
 ताते ये इदीन सुद्धि थै ॥ और इदीन के स्वैकोम न हें ॥ विचार सो करिये ॥ जो वि
 चार विना विषय करे तो चाण्डाल बन होय जाय ॥ केसे जो परस्वी सो न करिये ॥ अ
 निज स्त्री सो ॥ एत एक दशो पूरा मां अग्नि में न करिये ॥ तो जब विषय करे तब या
 विचार जो अज्ञान को उत्र प्रीय प्रगट होइ ॥ तो उपुत्र भगवद् प्रणय रा होइ ॥ ताक
 के भरो धर्म करे ॥ पर भाव विचार कानो ॥ पर विषय बाध करे ॥ अन्याय अ
 पना सुख वे चाको तो इदीन मम सब बहिर्छुख होय ॥ और परस्वी सो महा दाय है
 नाते अपनी स्त्री सो रतिकर ॥ काम निवृत्त यथया श्री क्लृप्त प्रसन्न होय ॥ तो

काम को प्रगट है ॥ ताते जो काम को कसो न कोपे ॥ तो अने कथकों अने फल होतें
 ताते काम वासना उन हो को सुषे ॥ विषय में अपने सुखन विचार तो प्रसु प्रह
 को विचारने ॥ या प्रकार विचार के निज स्त्री सो करे तो वाधान करे ॥ अथ मल इदी
 को प्रकार कहतें हैं ॥ अब मज जो है ॥ सो मद्रा प्रसाद को सांग राते ॥ जना भीनि प्राप्त
 होतें ॥ ताते न समो सरोर उष्ट्र होतें ॥ ताकर मल को त्याग करतें ॥ तब सुद्ध होय
 नव भगवान के सेवामें काम आवे ॥ और जब तारि न ज त्यागन को तब तसेवा
 और कष्ट कान हो ॥ ताते मज को न काल त्याग करने ॥ और जो विना विचार को तो
 पाप होइ ॥ काहेते ॥ पृथ्वी सपे पृथ्वी चंद्र इन के अंगे न ल त्याग होतें ॥ तो त्याग करे
 तो सामर्थ्यवान होय ॥ तो भवतसेवा नली भाति सो कपिये ॥ ताते मल को त्यागते
 सो सो देह को सुद्ध थै ॥ और रन इदीन में ॥ तो जान इदी ॥ प्र कर्म इदी ॥ तो म
 इदी तो भगवान की दासी है ॥ ताते उनको भगवद् सेवामें विनियोग होतें ॥ और ये ॥
 इदी के निष्ठे ॥ प्रलक्षी भगवान तारि पृचन हो ॥ ताते ये ॥ कनिष्ठ उन इदीन की
 सेवा करे ॥ जैसे कोरि भगवद् हो ॥ बाके हासदा तन लान कराये ॥ तब सुद्धे न
 गवद् सेवामें जाय ॥ और हासदा भगवद् हो को सेवा सिद्ध भरी ॥ सो भगवान की
 सेवा और भगवद् को सेवा सनेह ॥ सो ये ॥ इदी उनको सुद्ध करतें ॥ ता पक्षे
 न की योग्यता होतें ॥ पाछे भगवद् सेवामें अर्थ का होतें ॥ पाछे न व इदीन
 द्वारा कनिष्ठ इदी को भगवद् प्राप्त होतें ॥ पा भाति सो ॥ इदीन को कपि करतें ॥
 अन्याय करे तो दोष होय ॥ १५ ॥ अब और कहतें हैं ॥ सो ॥ पस्य भगवद् कापिये
 दास्यं नरस्यते ॥ तदा विनुष्ट स्य कति अरति निष्किया ॥ १६ ॥ याकी अर्थ
 जा प्रकार ऊपर कहे ॥ ता प्रकार सब को भगवद् कापिये विनियोग करने ॥ जो इ
 दी अथ पर होय तो मन रू अथ पर होय ॥ तो बजोब को आमुरवे महोय ॥ और
 भगवद् से सधुष्टे तेशी गुरु जी अथ न होय ॥ तब भगवद् प्राप्त हो ॥ ताते सदा
 भगवद् कार्यमें तत्पर रहने ॥ सो सब और प्रसिद्धे ॥ सो भगवद् कपिये में सेवा स्म
 रण इदी परते ॥ अति नो भगवद् त्या होय ॥ जो लौकिक नरेह इसे न वरि सुख हो
 नाते इदीन को अथ मय भगवद् कापिये में लगावे ॥ जैसे नरे में कोरि बलु बरो जा
 ते ता वाको को ॥ ना न कोहे तो यह जल में हो वडे ॥ नेसे तो पा संसार सुद्ध में
 इदीन न हो ॥ तिन को से सारते को ॥ भगवद् कामें लगावे ॥ तो कल्याण होइ ॥ ताते

निरो ॥ तोसे आर में विषया सीतलो जाय ॥ सब इंद्रो वरिभुजकोर ॥ ताते जो म को जनता
 १२५ ॥ करे ॥ पनिश्च भक्ति नागे में दासहे स्वतंत्र होय ॥ जानी अपने धर्म को विचार
 जो दासका धर्म भजन स्मारीते ॥ सो यहके संहार करे ॥ जो जमी को भगवद आस
 सो तो सवरी वृत्त जान करे ॥ नागेन सो कहतये ॥ नो इद्रो को को जीतने पर ॥ न
 हो कहतये ॥ इनको अस्वरूपरे जिनको प्राप्ते ॥ साक्षात भगवानको प्राप्त नसि
 सो भगवान भक्तनको रक्षा करे ॥ भक्तनको गिरे नदे ॥ और जो जो अपने साध
 नके वलने चनतये ॥ तो जानको रडे ॥ चना इमान होय ॥ तो अष्ट होजाय ॥ कारते उ
 हा साधनको वलने ॥ भन मार्गीको भक्तिको वलने ॥ और जो लौकिक शास्त्रिको वि
 यया सीत होय ॥ तो वाजीवका नाम न होय ॥ आगने जन्म भक्त प्रगट होय ॥ भक्त
 वोजन होजाय ॥ और जो जो विषया सीत होय ॥ तो जन्म जन्मको जान जाते ॥
 ताते जानको साधन कहते ॥ और जो जो मोक्षते तुच्छ ॥ भक्तके साधन सुपय
 ई जाये ॥ आत्माको कष्ट नही ॥ महा प्रसाद सो निर्याह करे ॥ ताते ब्रह्म व भगव
 काये में लौकिक दृष्टि नराये ॥ और इंद्रो न को निग्रह करे ॥ लौकिकते द्युपुत्रो
 कि वने लगे ॥ सो श्री आचार्ये जी कहतये ॥ जो पर उष्टि नागे भनिश्च को को सि
 द्धांतये ॥ और उपाय प्राप्त को नही ॥ ताते जो वृज भक्तनको निरोध भये ॥ तो अप
 र करे ॥ ताते जो प्रकार पाये कहते ॥ सो निश्चै ही करतये ॥ अथ सो सो स्तोत्र कहतये
श्लोक ॥ नात परतरमे चो नात परतर रस्तव ॥ नात परतर विद्या तीर्थे नास्ति
 परतरये ॥ २५ ॥ **पाको अर्थ** ॥ अथको रिके जो उम पर निरोधको प्रकस करे ॥ सो
 पा उपरोत कष्ट और है ॥ जा करके प्राप्त होय ॥ पर पर्व पस करे ॥ महा कहतये ॥
 जो पाके उपरोत उष्टि मागे पाये का और उपाय नहीं ॥ कहते ॥ संपूर्ण भगवत
 सास्त्र सर्वमे निरोध ही है ॥ सो इसम संकथ परम फल रूपये ॥ सो निरोधको प्र
 कार को रीजा नत म हता ॥ सो ज ता र बे के लोपे श्री आचार्ये जो सुयो धने जी
 कहते ॥ जो वरि प्रकार चले तो निरोध होय ॥ सो श्री आचार्ये जी महा प्रभू उष्टि
 द्वि जीवको देव सुबाधनी जी प्रगट कोये ॥ त्यों उष्टि भक्तको निरोध विना अयोग्य
 रहे ॥ नो महा कठिन है ॥ पर विचार के श्री आचार्ये जी ने जो वनेके उष्टि घ निरोध
 न क्षमा ग्रंथ कोये ॥ सो यह निरोध लक्षणा सगरे सुबाधनी जी को भाव है ॥ सो को
 नो पर सवा पर जानने ॥ और पर जो निरोध लक्षणा है ॥ सो सब वस्तु सिद्ध है ॥

में कष्ट नहीं ॥ सो या समान और भक्ति को उपाय नहीं ॥ सो कहतये ॥ या समान में
 यह नहीं ॥ कहते ॥ मंत्रको जपत जपत कहे कल्प को कृपा होय ॥ और निरोध होय
 नव बह जीव कृष्ण रूप भयो ॥ जो ज यह निरोध होय ॥ वे के जीये कम तरे ॥ ताते निरो
 ध समानको री मंत्र नहीं ॥ और पचा सार अष्टा सार निरोध रूप है ॥ उग्य तो पर है
 जो निरोध समान विद्या नहीं है ॥ ताते और सुबाधनी जी और अष्ट मार्गी ग्रंथ
 के भाव को व्याख्या न करे ॥ सो विद्याको काये नहीं ॥ इनके भाव तो रूपते जो न
 सो निरोध रूप हो है ॥ पर तु विद्या पर के साधनके वलने करतये ॥ सो निरोधके अ
 गे विद्या इ तुच्छ ॥ और निरोध समानको लो धर नहीं है ॥ ताते और द्युपुत्रो जो विस
 जतये ॥ तात वृज भू मती धने मन लने ॥ पर तो निरोध रूप है ॥ कारते जब भग
 वद गता करे ॥ तव सब तीर्थे नी चले और ॥ तो उहां उष्टि प्रहवा तम विस जतये ॥ अप
 र तीर्थ प्रधी फते ॥ सो सर्व निरोधके और तुच्छ है ॥ पर पर जताये ॥ जो यह नि
 रोधके सो ॥ सो पर है ॥ जैसे श्री द्युपुत्रो जो वृज भक्तनको निरोधकोये तैसे श्री
 आचार्ये जी महा प्रभू प्रगट कोये ॥ सो यह ॥ निरोधके सो है ॥ श्री प्रणी पुर्वी न विस
 और को जान नही है ॥ ताते पर निरोध लक्षणा ग्रंथ प्रगट कोये ॥ अथ और
 गिराय जी कहतये ॥ वा प्रकार उष्टि मार्गी भगवदी को निरोध कहते ॥ ता ही रीत
 प्रमान चले ॥ जो और न बनि और वे तो ने म सो भाव पूर्वक पाको पाठ को ॥ तो श्री
 द्युपुत्रो जी को रूपते भगवद सेवाको योग्यता है ॥ पाछे निरोध सिद्ध होय ॥ ताते
 लक्ष लक्षमे या निरोधको चिन मन करतये ॥ ताते सब पचा श्री निरोध सिद्धे उने
इति श्री व स्वभाचार्ये विरचितं निरोध नक्षत्रा कोटी का भाषा में संपूर्ण म
॥ अथ सवा फल को रिकानिरयत ॥
 या इ श्री सेव ना प्रोक्ता न त्सी ही फल मुच्यते ॥ अलौकिक स्थरने हे चाद्युः
 सिध्यन् नो रथ ॥ २॥ **पाको अर्थ** ॥ पासी करे ॥ पत्य कार जो सेवा प्रोक्ता करे ॥
 सिद्धांत उक्ता वलौ विधे करे ॥ **श्लोक** ॥ नत्सी धौ फल मुच्यते ॥ तत करे जो सिधान
 उक्ता वलौ विधे करे ॥ जो मान तो सेवा ना को सिद्ध करे ॥ पर साध करत सते फल
 मुच्यते कहते ॥ विविध न जो अलौकिक साध्य ॥ सा उपज और सेव स्थेगी व
 त बे कुठार विधे ॥ जो पर तो नो फल है ॥ सो सेवा फल विधे कहतये ॥ पुन विधे
 तथा सन्यास भोग्य विधे ॥ जो सेवा भावना करे ॥ सो ते सो फल होय ॥ ये करे है

॥ सेवा ॥ सोयते जीवैः सौ भावना करोगे तेसेही फल मिलेगा ॥ **॥ १६६ ॥** **॥** प्रविष्टिये ३ फल बरे उन
 को प्रयोजन करा ॥ जो अथयह संदेह दूर करने हो ॥ **॥** अलौकिक सदान गरीबों
 सिद्धे नोरथ फल बाधकारे वा ॥ **॥** याको अर्थ ॥ अथयहोतु अलौकिक सदान
 अलौकिक सामर्थ्य को दान जब श्री ठाकुर जी करे ॥ सो ततसेने यद्यन नो रथ सो
 लां नपाने न्व को मनार्थ सिद्ध होय ॥ और जब श्री ठाकुर जी दान करे ॥ तो वह निश्चय
 कें फल करे ॥ सायुज्य अथवा अधकार करे ॥ तेवापयोग हेर वै उंठादि विषे स्थि
 होय ॥ सरैर की योगता को विसेव तासाधन विषे हरे ॥ सो तब अधकार को फल
 सोकोवेनो ॥ जो पहदर को वेको करत हे ॥ **॥** नको लोचनीपामक ॥ **॥** अर्थ ॥
 अधकार विषे काल नियाम कनही करे ॥ याको अर्थ नही ॥ सो तोने निश्चय सो
 याते फल करे ॥ जो काम अधभय स्तह मेव सु सहद मेव वा निश्चय विधि नपा
 ति न न्यय तोहेत ॥ पावाका विषे काम जो धादिकों श्री ठाकुर जी विषे नित्य विधात
 करके न न्यपता करे ॥ नव सायुज्य होय ॥ सो तब तीसरा फल होय ॥ पहदर को फल
 सो दू करन को चरन करन हे ॥ **॥** उद्देग प्रतिबंधो बानो गोवास्यान ॥ सेवकार तम
 जब उद्देग प्रतिबंध भोग येती नो प्रतिबंध करे ॥ सो तब सायुज्य नदरे ॥ सेवा कर
 संते दुष्टादिकनेतन को भय ॥ अथवा पापाप करके उधेको चंचल सो उद्देग सोला
 नको प्रतिबंध के सेवा विषे ही चें ॥ सरैर को सामर्थ्य हे ॥ और सेवा करे के सो
 लौकिक वीदक कार्पादिक व्यापार सो वारो सेवा को प्रतिबंध ॥ उरबदर जब प्रतिन
 सोपा सेवा सांभोग और हेर ॥ और शिरोऊन के विषे हे ॥ सो सेवा और मान सो सेवा
 हे ॥ उनके प्रतिबंधते मान सो उतम नदरे ॥ सत न्यपता सायुज्य नहेत ॥ अलौकि
 क सामर्थ्य तो दामसाध्य हे ॥ जो दान तेजो न्यो जाप नही ॥ सो तब मेसेवा करत हे
 सो अधकार फल मिलेगा ॥ अथवा संदेह को दूर करन हे ॥ **॥** उवोधक अर्क
 व्यं भगवत ॥ सर्वथा चेंद्रीतनी हय धावा **॥** याको अर्थ ॥ उसेकानि एसें बाधक
 बाधकतीन ॥ तो अर्कतयं भगवत सर्वथा चेत करे ॥ श्री ठाकुर जी को सर्वथा फल
 जोन होय ॥ तब निश्चय के गतिन करे ॥ पान को हेरते उच्छ्रुन नही ॥ सद्यो मुक्ति ॥ अ
 थवा श्री ठाकुर जी ने प्रतिरिक्त जो वस्तु ता विषे मन की गतिन हे ॥ नाना विद्वान पा
 र्नाक विषे करे ॥ जो एक तान न्व सेसय ॥ पाप्रकार उरव्य फल अधकार को संदेह दूर को
 जो सर्वथा प्राप्त होय ॥ पवा पथ हाद बाधक ॥ अर्कतयं भगवत सर्वथा चेत ॥ **॥** अर्थ

अथ परोपयथा करे ॥ जा प्रकार के सेवा ता प्रकार बाधक ॥ जोति न पूर्ण कि वाधक
 श्री ठाकुर जी को स्विधान करे न होय ॥ तो बाध करे ॥ फल विषे कल्प सेवा मध्य होय
 तो मध्य मफलति होय ॥ तो निश्चय फल ॥ या भाति फल को विषे संदेह दूर करे ॥ सो
 तब फल विकल्प विषे कता करनो सो करत हे ॥ **॥** अर्थ ॥ अथ न्व निश्चय विषे कसा
 धनं मनं बाधकाना पोत्याग ॥ पूर्वोक्त साधन को अत्विनिधार और अविषे क
 ताको परित्याग करे ॥ पर धन न्व कसा हो यहा करे ॥ जो स्वल्प को निश्चय न्व
 निर्धार सो ॥ विवेक सु हरे ॥ सर्वतिनिजे छात करि याता ॥ परां करे नो विवेक सो करे
 सो नाते अतन्व निधीर ॥ और विवेक को परित्याग होय ॥ ता करके तो नवाधकन करे ॥
 सो नापाछे जैसी फल सेव तैसें बाधक त्याग करे ॥ सो तोते भाग त्याग आये ॥ सो
 तब सीर की स्थित करे ॥ और दान सेवा के संतोप ॥ पर प्रतिबंध जो हे ॥ तो अद्द
 जन्म हे ॥ सोला को त्याग ॥ और जब तारे प्रतिबंध को त्याग न होय ॥ तब तारे सेवानये
॥ अर्थ ॥ भोग्ये कंत धारण ॥ याको अर्थ ॥ अपि सवद समुचप विषे न करे होय सो
 ताको ग्रहण करिये ॥ भोग विषे न्योग करे ॥ एक छोडने ॥ तो म अस्कार को हो ॥ सो लो
 किक भोग छोडने ॥ अथ सदे प्रतिबंध छोडने ॥ जो प्रतिबंध अकार को हे ॥ जीव
 कृत छोडने ॥ भगवत कृत प्रतिबंध छोडने ते पह जानने ॥ जो श्री ठाकुर जी फल न
 हे हींगे ॥ नव ठरु बादिकन को सेवा केने ॥ सो ऊकथा ॥ सो जीवतो असुर सो ॥ अ
 प सोक दू करन निमित प्रपंच के विषे अस्तर ब्रह्मात्म कते न भायना करे ॥ तथा
 वेरांत विषे जरित सो अस्तर ब्रह्म को रपा सना करी ॥ तारी त सं को ॥ सेव अ
 स्तर ब्रह्म की प्राप्ति होय ॥ सो लो **॥** भोग साधन प्रतिबंध छोडने ॥ भोग छोडने
 स राम दान माहा नभोग प्रथमे विसते ॥ सदानि रंतर भोग करे ॥ अलौकिक
 जो भोग ॥ सो प्रथम अलौकिक समर्थ ह्य ॥ कस ता विषे विषय सो करे ॥ प्रविष्ट
 हेन हे ॥ जो लौकिक भोग छोडने ॥ सो हेतु करत हे ॥ **॥** अर्थ ॥ त विद्यो ज्ञो धान क
 स्याता ॥ याको अर्थ ॥ लौकिक भोग जो हो ॥ कान्धारिको विद्यु मस्ति घात करे ॥ प्रनिव
 धते ॥ सो पात छोडने ॥ प्रतिबंध त्याग करे ॥ सो पूर्व करे ॥ फिर परां करे ॥ सोला
 को मपोजन करे सो करे ॥ जो अथयह संदेह दूर करत हे ॥ **॥** अर्थ ॥ बलां हतौ सदां
 नतौ ॥ याको अर्थ ॥ ये करे ॥ लौकिक प्रतिबंध साधारण ॥ भोग लौकिक सदां
 जो दान सन विषे प्रतिबंध विचारने ॥ ज्ञान मार्ग विषे स्थित न हीं हे ॥ नव जीव

सेवा ॥ कोचिंताहोष ॥ सोकोकराफलहोगे ॥ जाकोदूबकोकरतहो ॥ **स्लोक** द्वितियेसर्विष
 चिंतात्याज्यासंसारनिश्चयान ॥ **पाकोअर्थ** ॥ द्वितियेनो भगवत्कृतप्रतिबंधसो
 होनसंते ॥ संसारनिश्चयानकेले ॥ जोवको संसारते अत्यंत श्रीभिनिसतेसर्व
 घाबहे ॥ अविश्वचित्तात्याज्याकरे ॥ फलविषयनी चिंताछोडनी ॥ संसाराविषय
 तश्रीभनिबेसते ॥ सोफलकोप्रतिबंधकरो ॥ ताते अक्षरब्रह्मकी प्राप्त्यूप
 नाकेप्राप्तकेनिमित्तसंसारके श्रीभनिबंधछोडने ॥ प्रतिबंधछोडने ॥ जोउद्देग
 छोडने ॥ कोहेते ॥ परसेहेरदूरकरते ॥ **स्लोक** ॥ त्वाद्येद्वान्दतीनास्ति याकोअर्थ
 सो संसारकी निरासविषय आद्यजोउद्देग सोहोतसंतेनकरे ॥ फलसाधनविषय
 नोचिंताछोडनीनही ॥ सोतहोतेतुदात्तनास्ति अलौकिकसामर्थ्यरूपजो
 फलताकेअप्राप्तविषय ॥ श्रीठाकुरजोकोफल देनोनाही ॥ श्रीउद्देगतोमाने
 सोमानसोकोप्रतिबंधकरे ॥ तातेउद्देगतोसंते ॥ उद्देग दूरकरेको भगवत
 भावनरूपचिंताकानो ॥ तत्त्वनिर्धार औरविषयकरकरकेप्रतिबंधकत्यागि
 येयत्वकरते ॥ श्रीस्वतिबंधदूहोयनही ॥ तहांकराकारने ॥ परसेहेरदूरकरते
स्लोक ॥ द्वितियेग्रहबाधके **पाकोअर्थ** ॥ द्वितियेनो भोगरूपप्रतिबंधसोहोतसंते
 ग्रहबाधकरे ॥ सोभोगकोहंनछूटे ॥ तबश्रीठाकुरजोचरुपागेहं ॥ जोपर अतुल
 घनकरकेघाछोडने ॥ भोगभावतवसिधहोय ॥ सो अवस्यघाछोडने ॥ जोपर
 जोउदेकीसामर्थनही ॥ तबकरकरे ॥ सोकरतेहं **स्लोक** ॥ अवस्ययसदाभावा
याकोअर्थ ॥ परकरेफलकरे ॥ श्रीस्वतिबंधकरकरे ॥ जो अवस्यनिरंतरभावा
 करनी ॥ सोजवप्रतिबंधकरहोय ॥ अपनीहीनताथेविचारनी ॥ फलसोभगव
 तविचारसाध्यह ॥ जोहीनतापूर्विकभावनाकरना ॥ **स्लोक** ॥ सर्वजन्यनमने
 धर्म ॥ **याकोअर्थ** ॥ सबअन्यत्रकरे ॥ तनसाधनकरेगे ॥ जबफलहोपगे ॥ और
 प्रतिबंधदूरहोगे ॥ परभावनेतमनह ॥ सोधुनकरे ॥ बहिभुवताउपजे ॥ चि
 ताचिंत्यमात्रसो जब श्रीठाकुरजोकेआधीनहो ॥ सोतबभावनकोकराप्र
 योजना ॥ जोअवसेहेरकरतेहं ॥ **स्लोक** ॥ तद्विषयैषित्कार्यं ॥ **याकोअर्थ** ॥ तद्वि
 करे ॥ सर्वसमर्पनऔरसर्वप्रकारने ॥ श्रीठाकुरजोकेभावनते जोभगवरीहें
 तेऊपरहलं भावनकरतेहं ॥ सोकरे तहांकरतेहं **स्लोक** ॥ उपुष्टौनेद्विलंबसेप
 काहदिलंबनकरे ॥ जोउष्टिभपीनाग्रंथविषये साधनकेउपदेसकीपेहं ॥ सोतो

श्रीठाकुरजोसाधनद्वाराउपदेसउद्धारकरेगे ॥ सासाधनविनाकरेगे ॥ सोतोबही
 जानपे ॥ तातेदिलंबकेअभावकेनिमित्तसाधनकेउपदेस ॥ सत्यरजन्तइ
 त्तिगुनजीवस्य ॥ नेवमेचिंत ॥ चोपेस्तुभूतानो सज्यमानोनिबंधयत ॥ परसका
 इतस्कांधकोवाकतेचिंततेउपजे ॥ जोउठसासत्वाजनम ॥ तेकालकर्मत्वभाव
 वस्य ॥ तेसोभकूमीपावनसंते ॥ प्रतिबंधकरेतबकराकरना ॥ सोकरतेहं ॥ **धर्म**
 यगसोभेपिदृष्टव्यमेतिदेवतिमेमात ॥ गराजोसत्यरजन्तम ॥ तिनकोसोभ
 जोउज्ज्वलिकभाव ॥ सोभगवदाधीनहें ॥ तातेउहांसंतेरवकरे ॥ भगवतकृत
 क्तिंतजोहे ॥ सोरिक्तनेरवना ॥ रज्जिमेमतिभरे ॥ जोमेहांकरतेहं ॥ श्रीकीसा
 मर्थनही ॥ तहांकरतेहं ॥ **स्लोक** ॥ कुअष्टिरज्ज्वाकाची इत्यधेतसर्वधर्मभयका
अर्थ ॥ सास्त्रविषयमेहकेरुकावेकीनिमित्तसाधारनकेउपदेसोदरवतेहं ॥ ता
 तेसाधनोत्तरेगुराचलजोमायासोदूरहो ॥ जोकराचितपरकरे ॥ सोरिक्त
 विरुद्धयते ॥ सोकुअष्टिबाधकरे ॥ जोविकल्पकोकेउत्पन्नेहो ॥ सोधर्मकोहेते
 देवोकोसोउग्राभयो ॥ मनप्रापादुरस्यया ॥ नावेवयप्रधत ॥ मायामेंनातय
 तेपर ॥ गोतावाक्यविषयमायादूरकरकेनिमित्त ॥ श्रीठाकुरजोनेअपनीसतन
 हीसाधनकोसोहे ॥ औरसाधनकरकेनिषेधमायाकीनिकल्पनेहो ॥ सोत
 तिहमने ॥ श्रीठाकुरजोकोअभिप्रेत ॥ जोहेसोइकरतेहं ॥ इतिश्रीरारय
जोकरतेहोकासेवाफलकीसंपूर्ण ॥ अथमधुराष्टककीटीकालिखत
 अवप्रथमश्रीगंसांजी श्रीअचरिजीकोनमस्कारकरतेहं ॥ कोहेतेपरजोन
 धुराष्टकग्रंथश्रीअचरिजीप्रगटकीपेहं ॥ सोअत्यंतसदपरे ॥ जितनेसहें
 सोसबमधुराष्टककेभावमेंभरेहें ॥ तहितेश्रीअचरिजीमहाप्रभुमधुरास
 केभोताहें ॥ सोआपसदाभोगकरतेहं ॥ औरलोकरनेप्रगटनहीकीपे ॥ ताके
 प्रकासकरकेयोगश्रीगंसांजीप्रगटभयेहें ॥ तातेजाप्रकारश्रीअचरिजीम
 हाप्रभुमधुराष्टकप्रगटकीपेहें ॥ सोमंगलाचरामेंश्रीगंसांजीसबवर्णकी
 येहें ॥ तामेंपरकरे ॥ जोश्रीअचरिजीकेचरीकमलकेआश्रयविनामधुर
 रसकीप्राप्तनहीह ॥ तातेमंगलाचरनकोप्रथमश्लोककरतेहं ॥ **स्लोक** ॥ नमोतुता
 शनेमधुरप्रकासेनषरापराभरमनीजायाप्रता ॥ भाबेनेकरितप्रह ॥
याकोअर्थ ॥ अवप्रथमश्रीअचरिजीकेचरीविहिकोनमस्कारकरतेहं ॥ सोकहें

मधुः नमोतुनाशने ताको अर्थ यतहे ॥ जो श्री आचार्य जी विप्रयोगात्मक आधि
 ॥ १६५ ॥ विक्रमि रूपे ॥ तिनमें ये ग्राहें ॥ जो संयोग रस अमृतता को प्राप्तते ॥ तिन
 हां तइ जाके रूपमें श्री आचार्य महा प्रभुन आवें ॥ ताको तहां तरे गुष्ट पद प्राप्त
 ताते विप्रयोगात्मक अग्नि के अश्रय संयोग रस हे ॥ सो रस रूप श्री आचार्य को
 मधु अग्नि हे ॥ कोहेते ॥ जितने मधुर सामे धी रहते हे ॥ सो रस अग्नि के संय
 धते होत हे ॥ एते श्री आचार्य जी विप्रयोगात्मक मधुर मधुर हे ॥ जिनके अ
 श्रयते लीला के भाव रूप संयोगात्मक रस की प्राप्ते ॥ ताहेते श्री आचार्य
 जी अलौकिक अग्नि रूप हे ॥ ज्ञान बर गुष्टि मर्ग परम रस रूप मधुर रस हे ॥
 जके भाव रस अश्रयते ॥ प्रपते सब क न केहा नार्थ यत रस प्रगट कोये ॥
 और श्री आचार्य जी सहा लीला रस अश्रयत समुद्र में विराट् करत हे ॥ ताहेत
 श्री आचार्य जी कृत प्रथम महर रस रूप हे ॥ कोहेते ॥ कोई कोयाना चतुरा किसे
 कोरि के देवता के अश्रयते ॥ तिनमें रसनरे ॥ कोहेते ॥ उनको लीला रस
 अनुभव नही ॥ और श्री आचार्य जी ने जोग्य कोये ॥ सो आप श्री ठाकुर जी
 संग सहा लीला करी ॥ ताते अत्यंत रस रूप वचन हे ॥ सो तत्काल फल हेते
 नामे यत मधुराष्टक ग्रंथ हे ॥ सो प्रेम रस कर के मत होय ॥ हृदय में रस उमारे
 सो जहर प्रगट भयो ॥ सो श्री गुरु शिष्य न कलते ॥ श्री आचार्य जी सिस्या
 मिश्री सिंगा ॥ सवरीत प्रगट करी ॥ आप सहा श्री गोवर्धन नाथ जोगोवध
 न पर्वत के ऊपर श्री पधना सहित विराजते ॥ तहां नित्य लीला प्रगट हे ॥ त
 हां श्री नाथ जी की मंगला आती कर ॥ ताहेत श्री स्वामि नी जी के जे मोक्ष
 को अश्रयते ॥ ताते अभ्यंग स्नान कराये के ॥ ताहेत जन्म मृत्यु आगार का
 तहेते ॥ सो अंतर समयो ॥ सो प्रेम में दिवस तोप सगर श्री अंगको अनुभव
 हृदय में कोये ॥ जहर गुरीत संप्रगट करी ॥ सो आंग करंगे ॥ ताते यत जो मधु
 राष्टक ग्रंथ हे ॥ ताको गोप अर्पण हृदय में पाठ करे ॥ तो याको भाव श्री आचार्य
 जी की कृपाति सिध होय ॥ तो तपन को विचार करे ॥ जो मेरा मन स्वास्थ पयो
 हे ॥ ऐसे विचार रस प्रथम का भाव विचार ॥ तो पर महित को पावें ॥ तहीं तो अश्रय
 जाय ॥ ताहेत श्री आचार्य जी सिखा क पंथ प्रकट कोये ॥ अब मधुराष्टक
 का प्रथम श्लोक करत हे ॥ श्री ॥ अधर मधुरं वहन मधुरं नपनं मधुरं हृदयं

मधुरं जमन मधुरं मधुराधिपते रिवले मधुरं ॥ याको अर्थ ॥ अश्रय अश्रय
 मधुरं मेनाना प्रकट के भाव हे ॥ श्री ठाकुर जी के अधर के सेते ॥ प्रहारा सोभा
 हेत हे ॥ ननेके अंगे विवा फल लजाय मानरे ॥ ऐसे विवा पल पर शुक्र नासि
 काहेय वंश हे ॥ सो मानो वि वा फल की रसाथि बंधी ॥ ऐसे अश्रय तस्वर हे
 और अधर के ऊपर नासिका में वंश हे ॥ सो अत्यंत सुख उजाले ॥ सो मानो
 मुक्तान होत हे ॥ मानो बक परम साभायमान आपोहे ॥ सो दूते अर्पण माजन जा
 न जवनिकट अर्पे ॥ तब चतुर धनुष जो श्रुती ॥ और नेत्र के कटा क्षुणी
 बानन सो बक को उरये ॥ या प्रकार बंध के नास का रूप जो रवे भरे ॥ तहां बक
 छी चार को कंचन रूपी जवरी सो बांधे ॥ इसो भाव ॥ शुक्र जो अधर विद्वी
 रक्षा करत हे ॥ तिन अर्पण मन माये चारु ॥ मन कू मरे भोजन लय ॥ ताते शुक्र
 नेव क को हृदय बंध के अपनी चोच को बोध के बांधारवे ॥ अथय बक जेहे
 सो नासिका कपाडन परत हे ॥ जो महारस मुखा विंदे मेरे ॥ तहां जो जाने ॥ में
 तं कंचन हेत हे ॥ सो सुक नही लत ॥ सो परस्पर वाते करत हे ॥ अथवा रिव
 फल जो अधर हे ॥ और करी में भरु कृत जो कुंडल हे ॥ सो दो ऊभय पोष ॥ सो
 विवा फल पर जाय ॥ जो शुद्ध मेरी देरी अर्पे ॥ सो विवाध और कुंडल आपस
 में विचार कोये ॥ जो उर दोऊन को बांधि नासिक रूप रूप में डार होये ॥ या प्र
 कार शुक्र और बक को कंचन की जवरी में बांधे ॥ सो कूपर धृत्स नासिका के जो
 सो कूप को मुख छोरो ॥ और शुक्र बक बे ॥ सो दोऊ बांधे ॥ ताते उर नही सकत
 से सो उपमा कहो ॥ जो फेर अधर के सेते ॥ जिन की छावि बंध के स्वामि नी जी के
 उत्सव स्नेह परमात ननिर्विकार ॥ सो रमानो मुक्ता फल उजाले ॥ सो अधर रस
 के पान को अर्पे ॥ तव रस पान कर मत होय गिन न जलगे तव नासिका रूप
 रं चोको पकर धूमत हे ॥ अधर वा अधर रस पान को ॥ तिनको मत होय के लूटी
 पकाव की सुध करी तेरे ॥ जब श्री स्वामि नी जी मुक्ता रूप तहे के रस पान कोये
 तब हेतान संधान भूल गं ॥ तब श्री ठाकुर जी ना सक रूप जो घरते ॥ क्वाकर
 तहां बंधार गरे ॥ तामें श्री ठाकुर जी ने श्री स्वामि नी जी सो पर जतये ॥ जो नुप मेरे
 अधर रस पान को कोयो ॥ तिनको त्याग होके संकट ॥ तामें मेरी अधर रस जो
 सिद्धाते ॥ नासका रूप घर में नुप सदा विहार को ॥ और श्री ठाकुर जी ने श्री

॥ मधु ॥ पिने जो सोबर जताये ॥ जो नुपविना श्रम कल नही परत ॥ ताने मेरे जनासिका
॥ १६२ ॥ रूप धर मे सदा विराजे ॥ साभाने कटिके नासिका मे स्वामिनी जी को भासा
 रिवे के अपने घर रूप जो सिज्याहे ॥ और १ समे श्री आचार्य जी श्री नाथ जी को
 अंगार करतहे ॥ सो श्री नाथ जी हंस संसके जैसे वस्त्र अंगार करतहे ॥ सोर श्री
 आचार्य जी धरवे ॥ तव श्री नाथ जी श्री आचार्य जी सोंकरे ॥ जो ब्रज भक्त मे
 अति सुख देतहे ॥ तासो माको प्रान प्रिय रहे ॥ तैसे नुम को को सुख देतहे ॥ ताने
 म और ब्रज भक्तन सो १ सन दर नही रह ॥ तव श्री आचार्य जी पर मुन मंद सुख
 का १ अत्यंत सने सो श्री स्वामिनी जी को और कटाफ कर देये ॥ कहेते ॥ अपु
 श्री स्वामिनी जी के भावरूपे ॥ सो श्री आचार्य जी के देखते ॥ या नो कोरि कंचन
 की लता श्री अंग को चाक बि कमाने ॥ कोरि दू पन कोरि दामिनी कोरि दामिनी
 ज्ञा कोरि पवतहे ॥ ऐसे रूप स श्री स्वामिनी जी पधार ॥ सो मानो कोरि अंगार स
 अपरी धर के स्वरूप ॥ मानो मत ग जग सो म क्योप ॥ घुमत लुका त तां ल
 ओ मय मेरे धीरे धीरे ॥ आभवन को गृहाकार के ॥ श्री नाथ जी की दृष्ट सो नवा
 रके पाछे त आये के श्री नाथ जी के गुण कमल को चुबन कीयो ॥ सो पीक की
 छाप को लन ऊपर ॥ हो ऊ आर जो अधर स ॥ ताकी १ लो क की छाप लागी
 नामे द्विस्तात्मक स्वरूप को दो उलेख प्रगट कर जताये ॥ सोर स्वरूप श्री गोविं
 न नाथ जी के कपोल में छाप देवके ॥ श्री स्वामिनी प्रेम विवस होरती ॥ और
 श्री गोविंद न नाथ जी निहार चकत ले परहे ॥ रसके भर के उपर ले चकल
 जित भये ॥ और हृदय के भीतर धर मरस के अंनद को समुद्र उम गयो तव
 हृदयि देव श्री आचार्य जी के धर म अंनद भयो ॥ सो प्रेम को अनुभक्त को
 पाछे सवा दर उम गयो ॥ तव पर करे ॥ अचरं मधुरे नाम ॥ अधर ब्रज भक्तन
 अनुभव मे अत्यंत मधुरे ॥ सो सब रसके भोता श्री आचार्य जी हे ॥ जो अध
 र मधुर तो अधर स सो सदा भ सोहे ॥ पंजु अंज अति मधुर सरित लीला को
 स्मरण का वत सो भाइतहे ॥ फेर श्री आचार्य जी मन मे विचार ॥ जो जिनके
 अधर को सो भाइते ते सो सुषुप जतहे ॥ सो जो अधर को पान करतहे ॥ नि
 नके अंनद को अनुभव नही करे जान ॥ ऐसे हृदय मे विचार प्रेम मे विखल
 होय ॥ आप श्री गोवर्धन नाथ जी को अंगार करत ॥ भी नर सो अपु श्री स्वामिनी

जो रूप हे ॥ सो इन हृदये लो नगयो सो अपु अधर चुबन कीयो ॥ फेर अपु करे ॥
 अचरं मधुर ॥ जैसे कोरि मधुर वलु पाप वखा न करे ॥ नैसे श्री आचार्य जो अपु
 भवा को के पाछे बगान कीयो ॥ ताते श्री आचार्य जी के वचन स्वरूप जान कर
 ने सुने ॥ तव श्री गोवर्धन नाथ जी मुक्त काय के श्री आचार्य जी के रूप ते लप
 ट गये ॥ सो श्री गोवर्धन नाथ जी अधर मधुरे ॥ पर श्री स्वामिनी जी के मुख को
 पीक तिनकी छाप जो लागी ॥ ताने अधर विंद अत्यंत सो भाइते हे ॥ सो श्री स्वा
 मिनी जिनित्य अंगार मं पधार तहे ॥ सो गोवर्धन नाथ जी अपने मन को अंगार
 श्री आचार्य जी द्वारा करावतहे ॥ और अंगार भोग को सामि श्री स्वामिनी
 जी के मनो रथ कीले ॥ ताते श्री स्वामिनी नित्य पधार मध्यान सम को संकेत श्री
 नाथ जी को ज तावतहे ॥ ताते अंज पर मन मे अधर ॥ जो अपने गुण मे जो तव
 लर सो सुंदर रंग भयो ॥ अपने मुखा विंद सो ई छाप ॥ सो छाप रूप मुख कम
 ल ता वूलर स रूप रंग मे भर के ॥ श्री नाथ जी के अधर रूपी कग दता मे अपु दीने
 नामे पर भाव स चित्त कीयो ॥ जो फलानो टोर स भोग पीये ॥ गौ चार लीप स पधा
 रियो ॥ नरों मे अंजु गौ ॥ या प्रकार संकेत जनावतहे ॥ अधर श्री स्वामिनी जी
 जान्यो ॥ जो श्री ठाकुर जी ब्रज भक्तन के मन को हगा को पते ॥ सो विचार ब्रज
 भक्तन को पर जताये ॥ जो श्री ठाकुर जी हनोरे वसते ॥ श्री के अनुभव मे नही अधर
 ऐसे नुमा रे वस नही हे ॥ कदाचि त श्री ठाकुर जी कहे पधार ॥ तो श्री स्वामिनी जी कुं
 न्यारी नही करे ॥ और अधर स्वरूप दाने ॥ ताते लीले त वि भग श्री गसाई जी
 लिखे हे ॥ जो पर ललित त्रिभंग स्वरूप को अनुभव श्री स्वामिनी जी ली जामने
 उनके अधर स प्रगट भयो ॥ ताते ब्रज भक्तन को श्री स्वामिनी जी के चरन
 सेवन ते रस को प्राप्त होय ॥ या प्रकार अधरं मधुरं को ब्याख्या न करे ॥ अधर वलं
 मधुरं करे ॥ जो बदन समस्त मुखा विंद को नापरे ॥ जैसे च प्रस्ये को दे स्केरं
 पर च इ माते ॥ पर स्ये हे पर काह के ॥ करण नासिका पर वरी खत न हो ॥ कहेते
 ते जने ॥ तैसे ई रहां कोरि के हृदय लव न्य की छवि कोरि च इवा र डीरियो ॥ ऐसे मु
 खा विंद के देव भक्तन वि बसते हे ॥ पर मुधन हीर हत जो स्यो न्यो अंगन
 को अधर लो कन कर सके ॥ ताते कहे वदन मधुरं ॥ और १ समे श्री आचार्य जी प्रसी
 पर कमा कर श्री गो कुल जी पधार ॥ नरों श्री गोविंद धार हे ॥ नहा छों कपी पर

मधु के रस भगवद् स्वरूप होते हैं। नहो एक समे श्री आचार्यजी महा मधु पौंडरीते। जो निने
॥१६३॥ उद्धार कोषिताकार तहने। सो आर्धरात्र को श्री ठाकुर जीने श्री ज्ञान देना। जो उद्यम स
 धरुआ श्री सोद सैनकर दोऊ स्वरूप को एकत्र ना देख वदन मधुर करे। नाते नान
 कमलमें कपोल चिउक गंग स्थल में वरुन मधुर के भोतर सब भाव करे। नहो निने
 क श्री चंद्रावली जीके भावने विराजते हैं। ताहो ते चिउक पर श्री नाथ जीरोर को पा
 तहें। श्री ऊपर करे श्री ठाकुर जीवे सर धरें। सो श्री स्वामिने जीको भावते। ताको
 श्री भिषय कहते हैं। जो अधराभूत को अतुभ व कावे योग्ये हैं। सो ऊपरने न
 तिन ते उतरतो श्री चंद्रावली जीहें। नाते श्री स्वामिने जीके अधर उपर विराजते
 नासको के वसरूप। श्री श्री चंद्रावली जीके अधर नीचे विराजते हैं। नाको भाव
 वरुहें। जो श्री स्वामिने जीके पोषाको पाछे श्री चंद्रावली जीको रसपान काले
 जो ग्यतोहें। काहते सवे अधराभूत को पान श्री स्वामिने जीको तहें। जो पान काल
 में श्री ठाकुर जीके मुखने रस वरुहते हैं। सो चिउक पर आवतें हैं। नहो श्री चंद्रावली
 जी विराजते हैं। नाते उनमें यह भाव विचारने। जो मुख्य श्री स्वामिने जी। नाते
 उतरें श्री चंद्रावली जी। तिन ते उतरें श्री भक्तहें। तिनको अंगे निरूपन का
 तहें। जो कपोल पर श्री स्वामिने जी स्थान अलकनमें आविर्भवि जानने। सो नि
 पमुना एकमें श्री आचार्यजी वरुन कोये हैं। जो श्री पमुना जीक मत तिन पर
 प्रभु गंजार करते हैं। सो श्री पमुना रूपमें श्री उसरि जी कहते हैं। जैसे श्री प
 नाजीके कमलहें। तैसे श्री ठाकुर जीको उरव कमलहें। अधराभूत भीतर सा
 रिस तहें अनेक भक्त प्रभु रूप विलास करते हैं। रसपान करवे केलीपें नैसि
 श्री पमुना जी अलकावली रूपहो उरव कमलमें विहाए करते हैं। नहो श्री पमुना
 जीमें मीन आदि करते हैं। सो अलकावलीके निकट मकराकृत कुंडल अने
 क भूषणहें। एसे वदन कमलको वरुन मधुर करे। श्री ठाकुर जीके नेत्र कमल
 केसेहें। मधुरें काहते। जो भक्तको कपहाकर देवतहें। ताभक्तके पान होजत
 हें। तिनको दान करवाने कोये हैं। काहते वानहें। सो जाके रनागतहें। ताको भी
 तर साल तहें। गीर होतहें। ताको कष्ट मुध नाही रहन। ना जो तेनेत्रको वानकर
 निरूपन कोये। श्री श्री ठाकुर जीके नेत्र कमल केसेहें। श्री स्वामिने जीके मु
 व कमलको देव धाकित होहें। श्री अरुणहें। सो श्री स्वामिने जीकी

अनुशा देवतहें। श्री श्री ठाकुर जीके नेत्र कमल केसेहें। जो नेत्रमें मंदरास्य
 मृत भरा होहें। सो गोपीजन परम चतुरहें। सो लोचनहें। जो नेत्र कमलके
 भावको श्रीके रिजानत नहो। एक भक्त जानतहें। सो कहतेहें। जो श्री ठा
 कुर जीके नेत्र कमलमें धरुस समुद्रहें। प्रथमतो कोटिके रूपे लावने मृत समु
 द्रोहें। १॥ दूसरो मंहास्या मृत समुद्रहें। २॥ तीसरो चापल्या मृत समुद्रहें। ३॥ चौथे
 अरुणा मृत रस समुद्रहें। ४॥ ताको भाव कहतेहें। जो कोटिके रूपे लावने मृत
 तको कृता सुभावते। जो वक्रनाम होय तो कोरये। जैसे गजके ऊपर वक्र अंगुस
 रहतेहें। नाते गज वसरुहतेहें। तैसे ब्रज भक्तनके मनरूप जोगजहें। ताको श्री
 ठाकुर जीने वक्र हृदि सांयातके अपने वस कोये हैं। रोकल भन सवै गोपीजन
 रस पचाध्यर में आरिहें। श्री अरुणरसको यह भावते। जो प्रथम तो उनको व
 सकोये। अरु उनको पालन करी चरिये। काहते। परने श्री ठाकुर जीको सरज
 धर्महें। सो सा करनी। नाते ब्रज भक्तनके मनको अपने पास राखि। वे दहासां
 मृत कर पोषा करेहें। नाते फेर ब्रज भक्तनके मन उनके पास नही गये। तरा
 श्री ठाकुर जीके निकरीहें। जैसे जो कधुर वस्तु खा तरुहें। ताके धोखानहो
 चोहें। श्री परतो मेइहास्या मृत। जो मे अधराभूत सो मेल्यो रस। ताको पान
 करेके मस्त भयो। सो जाइके अपेसा नही कोये। तो सो रसको भाव ब्रज भ
 क्तनको अनेक प्रकारके कामके भावने चहारा सूचन करतेहें। जो वरुन
 बपलने चहायें। तो भक्तनको श्री ठाकुर जी श्री भिषय जतावे। सो सव भक्त जान
 नाहीने चपलने चको परभावेहें। जो जा भक्तको जैसे श्री भिषय जतावतेहें
 सो रिजाने। बोले। चापल्या मृत कर सव भक्तनको रक्षा पूरन करे। चौथा स
 को यह भावते। जो अरुणा नाम अरुणग कोरे। जो श्री ठाकुर जी भक्तनके
 अधराभूत रसको पान अति अरुणग सीतल काये। जो लोके वेह नपीरा
 धो। अति प्रीत सीरस रूप सव भक्तनको कोये। ताते श्री ठाकुर जीके नेत्र अंगार
 रस रूप भावात्प करेहें। श्री नेत्र जो अरुणग कोरे। सो श्री ठाकुर जी भक्तन
 के विवेक धीरजाज अपने नेत्रमें राखेहें। ताते ब्रज भक्त श्री ठाकुर जी वसरो
 खेहें। श्री श्री ठाकुर जीके नेत्रको कमलको उपमा दीये। सो पाने जो कमल
 सहाज लमें रहतेहें। सो कमलको यह भावते। जो जलके वेहते अपरु वेह

॥ मधु ॥ नैसे श्रीठाकुर के नउहर सते भरेते ॥ श्रीमोहन वसी करन इत्यादि लक्षणाने भवेते ॥
॥ १६४ ॥ ताते श्रीठाकुर जी जव करन सफर करवतते ॥ या प्रकारे नउमें अने कभावेते ॥ ता
 दोते श्रीआचार्य जी महा प्रभु ने नउमें मंदरसन करते ॥ श्रीगहो रुसन मधुर
 परस्पर ब्रज भक्तन के संगाने जुन मंदिर विवेरे संसोरस्तना लीजेतते ॥ प्रभा
 ने हीवे अस्तकरोय ॥ अनांदे में हीसहेसिके सोरस मुरज्यवगाने ॥ श्रीग
 आचर्य जी जव श्रीनाथ जी को धंगार करतते ॥ तव श्रीनाथ जी हेसि हेसि
 केवाती करतते ॥ श्रीग श्रीठाकुर जी विवेरे हसन अने कभावेते ॥ कारते जव आप
 गो चारण को पधारतते ॥ तव सखान सोदास हेसिके वाती करतते ॥ ताके मसत
 भक्तन को अने कचचन करतते ॥ श्रीग श्रीठाकुर जी हेसिके अपने एषवथे को गो
 पारवतते ॥ कारते ॥ अपने एषवथे को तिराधान न करे ॥ तो ब्रज भक्तन सो या
 नादिके लीलान होय ॥ कारते मधुरसमें श्रीरस्यवथे विरधते ॥ सो हृष्टा नक
 तते ॥ जो जसोदा जी को जासमें उरवने वि लो क श्रीठाकुर जी हेसि वाये ॥ तव श्री
 जसोदा जी को भ्रम भयो जो यह कदा ॥ तव श्रीठाकुर जी ने विचार कोयो जो
 न को ईश्वर्य भाव प्रगट होय गो ॥ तो यह वात्सल्य रस जापगे ॥ जो मेस्को बालक
 जान अत्यंत स्नेह करतते ॥ जहा एषवथे जो न ॥ तहां तो जेसे देवता स्तुत करतते
 तोता प्रकार होय ॥ ताते हेसिके श्रीपसोदा जी बोले ॥ तव श्रीयसोदा जी यज्ञान
 जो यह तो बालकते ॥ नेही को भ्रमते ॥ नैसे ही हेसिके ब्रज भक्तन के मन रेरे
 ताते ब्रज भक्त यह जानतते ॥ जो परम सोदपे रूप नहु मारते ॥ रामोरपाम श्री
 तमरे ॥ सेसे जानके मधुर रसको आचरण करतते ॥ श्रीग श्रीठाकुर जी मधुर
 रसके वीच एषवथे करतते ॥ जगावते सकट शिवादि अग्निपान कोये ॥ सेसे श्री
 अकर पाछे मंदरसिके सवनके मन मोह तते ॥ जो मधुर रसको सुधन जाय ता
 ने श्रीठाकुर जी को हसनो सो मधुर रसको पोधारते ॥ ताते श्री आचार्य जी करतते
 अंध मधुर ॥ अथ करतते हृष्टमधुर ॥ ताको अर्थ यहते ॥ जो हृष्टमधुर ताते
 के ॥ जो अष्टप्रसर सरा सर्वदा श्रीठाकुर जी के कंठमें चोकी माला तार आदि वि
 राजतते ॥ सो हृष्टमधुर श्री स्वामिनी जीते ॥ तिनहो को भावसिंहन मालाप
 हायेते ॥ ताते हृष्टमधुर करे ॥ श्रीग श्रीठाकुर जी को हृष्टमधुर अत्यंत को मनहें
 अपने भक्तन की आतिनाही सहि सकत ॥ श्रीग देवतानिज स्वामीते ॥ जो इन

को स्वाद्यतेपता प्रसन्न होय ॥ नही नो जीवता युग करे ॥ नैसे श्रीठाकुर जी नाही
 जो श्रीठाकुर जी के सिवा में अपराध पडे ॥ तो आपस मा करे के रूपे करे ॥ मासप
 चाध्याई में जव अंतर ध्यान भयेते ॥ तव भक्तन ने फ जान्यो ॥ ताहू श्रीठाकुर जी
 भक्तन की रक्षा कोये ॥ कहते गर्भ मन मंभयो ॥ जो श्रीठाकुर जी अने ध्यान होय
 गर्व डरन करे ॥ तो इन को रसको प्राप्त न होय ॥ सो जव अत्यंत देव्य भव आपो जा
 हने होय भस्म होय गये ॥ तव पुस्तन में प्रगट भये ॥ ताछे रास लीला करस्य ब्रज
 भक्तन के नोथे प्रन कोये ॥ ताते श्रीठाकुर जी को हृष्टमधुर अत्यंत को मन लेते ॥ ताते
 हृष्टमधुर करे ॥ अथ कदे गमन मधुर ॥ स्नीला के अचरु सार उच्य अर्थ यहते
 जो गमन नाम चालि वे को दे ॥ सो तिन कुंज मंदिर में श्री स्वामिनी जीके संग प
 रस्पर गल वही देके मंद मंद चलतते ॥ तव दो उच्य रूप अनाद पावतते ॥ तदा म
 खी नाना प्रकार को सभिग्री लीयें दाड़ीते ॥ तहां तिन को रानिय मन हीदे अरु
 त सदा सेवन करतते ॥ जासमें जा लीला को इच्छा ॥ जापु की इच्छा सधन का
 लसिद्ध होए रहीते ॥ अथ वा गमन नाम प्रवेस हे कोते ॥ कारते जोान को ट भक्त
 न के हृष्टमधुर प्रवेस कोयेते ॥ सो ब्रज भक्त परनाही जानते ॥ जो हमारे हृष्टमधुर में
 श्रीठाकुर जीते ॥ कारते ॥ जासमें इन के पास अचरु आपोये ॥ श्रीबलेस्व जीस
 हित श्रीठाकुर जी को मधुरा लीयेते ॥ तव ब्रज भक्त प्रथम यज्ञान जो श्री
 ग ठाकुर जी मधुरा पधो ॥ यह जन अत्यंत विरह कोयो ॥ तव स्वस्वने कृष्ण में
 हतो ॥ सो ब्रज भक्तन को विरह युक्त देख ॥ प्रगट हाय रसानुभव काय उनहां
 के हृष्टमधुरे ॥ या प्रकार ब्रज भक्तन के हृष्टमधुर विरजते ॥ जभो ब्रज भक्तन
 को देह स्थिर रहे ॥ सो भावात्मक स्वस्वपथे वर करके अनुभव कावे पागे
 जहां तारि विरह नहो ॥ तहां तारि संयोग रस की प्राप्त हुन हो ॥ सेसे श्रीठाकुर जी
 गोपरीत सो ब्रज में विहार करतते ॥ ताते गमन मधुर केते ॥ अथ अंगे कते
 मधुराधिपते रीबल मधुर ॥ याको अर्थ यहते ॥ जो स्वगोला कत थापापला
 क श्रीगया पृथ्वी पर जितनी मधुर वलुते ॥ तिन सवन के अधिपति श्रीठाकुर
 जीते ॥ यह पद रश्मि के मंद ॥ सो श्रीठाकुर जी सप्रान को रिनते ॥ कारते ॥ जिन
 ने सो गार सते ॥ सच इनने प्रगटते ॥ ताते कह मधुराधिपते ॥ अंगे कते रीब
 लं मधुर ॥ याको अर्थ यहते ॥ जो समस्त अंगार इनने प्रगटते ॥ अथ वं ड विरध

मधु ॥ धर्माश्रयस्ककालावच्छिन्नसर्वलीलाकरनभंसमर्थी ॥ तातेसगेवलमधुरं पर
 ॥ १६५ ॥ या प्रकारप्रथमश्लोकको अर्थमयो ॥ **सोका** ॥ वचनमधुरं चरितं मधुरं चसंनम
 धुरं वलितं मधुरं ॥ चलितं मधुरं ॥ मधुरं मधुरं मधुरं मधुरं मधुरं मधुरं मधुरं मधुरं
याको अर्थ ॥ अब कहें वचन मधुरं याको अर्थ कहें ॥ जो श्री आचार्यजीको
 श्रीठाकुरजीने ज्ञाता है ॥ जो तुमजीवनको ब्रह्मसंबंध काय अंगीकार करोगे
 तिनके सकल दोसदूहो गे ॥ यह मधुर वचन ॥ और रास पंचाधारि में अलीन
 जारके ब्रजभक्तनको बोलयें ॥ तिनसो ऊपर तो कबो ॥ और भीतर मधुर ॥ ऐसे
 चन श्रीठाकुरजी ॥ जो तुम अपने घर जाउ सो भीतर जो मधुर भाव तो के जानवें ॥
 ब्रजभक्तनकी योग्यता है ॥ कहते ॥ ऊपर कहिये ॥ जो ऐसे श्रीठाकुर जीके कर्मल
 दयमें ब्रजभक्तनकी स्थिति है ॥ ताते श्रीठाकुरजीके दृष्टिके अर्थिभाष्यको माने
 मर्षादावचननमाने ॥ ताथे श्रीठाकुरजी यह विचारे ॥ जो मेरी अज्ञान अने
 कोहते आप मुगली वजाउ के बला है ॥ आपही ऊपरते कबो वचन करें ॥ सो
 ब्रजभक्तयो जाने ॥ जोरम को धरती पढवे को अज्ञात हो ॥ तो बुझावते को
 को ऐसे जानके घर नहीं गये ॥ ताते वचन मधुरं कहें ॥ और निकुंज मंदिर में
 श्रीस्वामिनीजी मानकरतें ॥ तब श्रीठाकुरजी अलसहित अन कवचनकर
 तें ॥ जो अचरिते अंपराध हमाको ॥ अहाय को दोयलगावतहो ॥ तब
 नमुगवे के लीये मरणासनमानकारतें ॥ ताते वचन मधुरं कहें ॥ अब चित्तमधु
 याको अर्थयह है ॥ जब गाढो मानतहो तब श्रीठाकुरजी आपसारी को भय
 धरके नावाप्रकारके चरित्र करतहें ॥ मानमनावतहें ॥ और मारव नौचोरी
 लीला में सखीनके धरि चोरी करनजातहें ॥ सो गोपिका पकरके आपसोहा
 जी घरले अरि ॥ सो श्रीठाकुरजी गोपिका नसोकरे ॥ जो या प्रकार मरे पुत्रों
 निव्यचरितगावतहो ॥ कहते ॥ ताते देखितो यह मरो पुत्रहो ॥ तब बहगोपिका
 देखके चक्रतहो ॥ और एकसमें श्रीठाकुरजी यसादाजीके आगनमें
 रिंगन करतहते ॥ तब आपनो प्रतिबिंब देख आप पकरनकोहो ॥ तहोके
 गोपीजन आपके श्रीठाकुरजीको गोदमें उठापलोयो ॥ अंधियारे निकुंज
 मंदिरमें पधारे ॥ तहो श्रीठाकुरजीसो विज्ञप्रकीये ॥ जोरमारो मनोर्थसीद्ध
 करनको प्रगट भयेहो ॥ सोको ॥ और तुम सर्वसामर्थहो ॥ यह रमको निवेदें

तब श्रीठाकुरजी प्रसन्नवयके मनाये पूजा करतहें ॥ ऐसे नाना प्रकारके चरित्र
 करभक्तनको सुखेहते ॥ ताते चरितं मधुरं कहें ॥ अब वसनं मधुरं ॥ जो अर्थ
 है ॥ जो वसननाम पदवस्त्र ॥ जो एकसमें निज मंदिरमें वसेहें ॥ सो आपनो पीता
 वर तो स्वामिनीजीके पासरहो ॥ और स्वामिनीजीको आपको पासरहो ॥ और
 श्रीस्वामिनीजीके नोला वर श्रीठाकुरजीको आपपधारतहें ॥ आलस सहित अंगजिन
 केहो ॥ रहते ॥ और श्रीठाकुरजीको अंगरेसो सुदहें ॥ जिनके संगत वसनदू सो
 भादतेहें ॥ सो अत्यंत मधुरं ॥ याहो सखीजन प्रसादी वस्त्र परतहें ॥ कोहते
 प्रसादी वस्त्र श्री अंगके संबंधते अत्यंत मधुरं ॥ कोहते श्रीठाकुरजी श्रीसा
 विनीजी संग नाना प्रकारकी लीला करतहें ॥ तब श्री अंगके अनुराग कमुकम
 अंगजा अंगसंबंधवस्त्रते होतहें ॥ ताते प्रथम स्वरूप सेवा तथा वस्त्रसेवा
 हउख्ये ॥ जो पसवसनको अनुभवते ॥ तोपंजोदासभाव श्रीठाकुरजीसो
 वतहें ॥ सो अनप्रसादी वस्त्रनही परते ॥ प्रथम श्रीठाकुरजीको अंगीकारका
 यपाछें आपपहो ॥ तो अस्लोकिके देह होय ॥ तब श्रीठाकुरजीको लीला अल
 भवकरबेजोग होय ॥ ताते दासको प्रसादी वस्त्र परहो ॥ और वस्त्र श्रीठाकुरजी
 के रसको आवरागकरतहें ॥ जैसे जब पीता वर श्रीठाकुरजी धरतहें ॥ तब श्री अ
 गको दसननही होत ॥ सो वस्त्रसो ठायो भीतरसेहो ॥ सो वस्त्रसो मिल्पे
 ताते वसनं मधुरं कहें ॥ अब वलितं मधुरं ॥ को यह अर्थ है ॥ जो आपही प्रमेय
 बलकरके ब्रजभक्तनको पुष्टि रोनसो अंगीकारकोये ॥ ऐसे पूतनाको मार
 निजभक्तनकी आविद्यादूकोये ॥ ऐसे सवदेव्यनको मारभक्तनके दासदू
 कोये ॥ और का लीको दमन मारनहीं ॥ कोहते भक्तनको रंटीको दमन करतये
 नहीहें ॥ जो रंटीनको मारे ॥ तो रसको भोगकोको ॥ दसनकरना लीलगावनी
 ताते सवअंगरे छुडाय आपनी औरलगाये ॥ सोये श्रीसो नही ॥ प्रनही प्र
 मेयवलितकोये ॥ तेसीही श्री आचार्यजी ब्रह्मसंवाधकाय रंटीसवपदधि न
 को दमनकर सेवायोग्यकोये ॥ कोहते प्रमेयमर्ग सो अष्टनग ॥ जो आपही
 भक्तकी जोग्यता कर अंगीकार करे ॥ ताते वलितं मधुरं कहें ॥ और श्रीठाकुर
 जीगोपीजनको प्रमेयवलित संकेतहकरतहें ॥ जो गोचारारखे ननमिस
 कारके ॥ श्रीनेदराय प्रसादाजीसो अष्टपके ॥ गोपीजनको निकुंज मंदिरमें पधारतहें

मधु ॥ और निज भक्तन के कार्य करवे में परम चतुर है ॥ सादा भक्त की रक्षा करीते ॥
 १६६ ॥ नेवलिते मधुरं कहे ॥ अत्र चलिने मधुरं को यह अर्थ है ॥ जो गौ चाने को भाव
 सों सरवान के मंडल में चलते ॥ सो देव के व्रज भक्त मोहित होत है ॥ सो व्रज भक्त
 न सो न ही रसो जात ॥ सो अपने घर नते मिस के आवत है ॥ सो सकल मनो धि
 सिद्ध होत है ॥ तहा और मधुरं कहिये ॥ मंद में ह्रीं ठाकुर जी चलत है ॥ जव और
 हावन में पधारत है ॥ तहां श्रीगोकुहन में अनेक गह्वर निकुंज परम सुख मान
 करत है ॥ अनेक पंथी भावसो बोलत है ॥ नाना प्रकार के फूल न सो चरत
 है ॥ अनेक लता छापर रही है ॥ मकरंद भरी सुगंध सहित त्रिविध पवन चरत है
 सो श्रीठाकुर जी के मन को मोहन है ॥ काम भाव को पावन है ॥ तव श्रीठाकुर जी
 मंद मंद मन हो चलत है ॥ तहां भावसो जाने जो अनेक व्रज भक्तन के संग
 मंद मंद गमन फूल वीन न विये ॥ निकुंज के पधारन के सिंघे अत्यंत मधुर है ॥
 नाते चलिने मधुरं कहे ॥ अत्र भूमतं मधुरं करे ॥ पाको यह अर्थ है ॥ जो कस
 अश्रुमि बसु को देखत है ॥ तव श्रीठाकुर जी को भ्रम होत है ॥ सो कहत है ॥ निकुं
 ज मंदिर में श्रीस्वामिनी जी और श्रीठाकुर जी विराजत है ॥ सो कबूटरे से सीध
 को लहर उठत है ॥ तव श्रीस्वामिनी जी कहत है ॥ श्रीललता श्रीठाकुर जी क
 हां कूंगे ॥ परदेख श्रीठाकुर जी को भ्रम होत है ॥ जो मेरे पितापं मेरे सावि
 रहत ॥ न्यारे भयतं कहां होय ॥ और रासादि कलीला में श्रीस्वामिनी जी नि
 त्य करत है ॥ सो देख श्रीठाकुर जी चक्रत हो परत है ॥ जो परगुण में मंदिर
 ऐसे अनेक म म श्रीठाकुर जी को होत है ॥ सो भ्रम मधुरं कोहते ॥ श्रीग
 वुर जी आपरी सक शिरोमन है ॥ सब कती है ॥ सो बाल कजे से अपनी आवा
 सब के भूलि रहित है ॥ ते सही व्रज भक्तन की छाया सदा संग रहत है ॥ सो
 आप व्रज भक्तन को चरित्र देखि ॥ वस भये है ॥ नाते धर्मिनं मधुरं कहे ॥ अ
 ने कहे ॥ मधुराधिपते रवे वलं मधुरं ॥ ताको संवोधन जानने ॥ जो इन समान
 के मधुर नरी ॥ सो ऊपर कथो भाव जानने ॥ स्नाक को निरूपन भयो अ
 व कहत है ॥ स्नाक ॥ वेणु मधुरं ॥ वेणु मधुरं ॥ पाणि मधुरं ॥ नृत्यं मधुरं ॥ सख्यं
 मधुरं ॥ मधुराधिपति रविवलं मधुरं ॥ २ ॥ याको अर्थ ॥ अत्र कहे वेणु मधुरं
 जव श्रीठाकुर जी ललित चरम स्वरूप धारत है ॥ तव वामपरा व्रत देखोय

वेणु में जेच सुर सांगन करत है ॥ सो अत्यंत मधुर है ॥ कोहते ॥ ललित चरम गे जो
 स्वरूप है ॥ सो व्रज भक्तन के भोग्य है ॥ ते सही वेणु नाद मधुर है ॥ सो रासपंचा
 ध्यारि को भावसो जानने ॥ कोहते ॥ सरव रास में वेणु वजाये है ॥ सो व्रज में कड़े
 न सुन्यो ॥ तव कुमारिका गोपि जानने सुन्यो ॥ सो रास में श्रीठाकुर के रास अर्थि
 और सखान संग तथा श्रीमंदरापय सोदा जो के अंग वेणु वजावन है ॥ इनही
 के उखेद नार्थ भेद जानने ॥ इन को उखि मयोदा सहित प्रमदं ॥ ताते इनको से
 होर सभोग करन को योग ताहे ॥ कोहते ॥ रासपंचाध्याय में जव श्रीठाकुर जी वेणु
 वजावत है ॥ तव वेणु नाद सुन गाय चक्र तहोर करी उगद के रसपान अवनदा
 राकोये ॥ उखे में चरन रहि गये ॥ वधरा हृद्य पीवन के पीवते है ॥ श्री यमुना जो स्थि
 र होर रही ॥ ब्रह्मन में ते मधु को धारा बरचली ॥ और श्रीगोकुह नद वी भूत भये
 सो अनेक ठोर चरन चिन्मये पशु पंथी सब मोहित भये ॥ या प्रकार सबको अ
 नंद भयो ॥ तामें संपूर्ण रस को अत्र भवतो भोगो जन को भयो ॥ तासमें वेणु नृत
 न कलावतो तान को अलाप चरि में उचीने चील लउठे है ॥ तेसी चरन की
 गीतों को वक्रता हस्त की चंचलताते ॥ व्रज भक्तन हृद्य की लाज धोरन सवन
 को अत्र आनंद को अत्र भव भयो ॥ वेणु द्वारा अंधरा मृतपान ते भक्त भये ॥ ह
 दय में जो भावा एक ठोर करार रहेते ॥ सो वेणु नाद सो प्रगट कोये ॥ जेसे स
 उदय मधुर प्रगट कोये ॥ ते सही भक्तन को भाव वेणु द्वारा प्रगट कोये ॥ कोहते
 हृद्य रूपी अगाध जल के भीतर चरते ॥ यह कहे नही जानत है ॥ सो श्री ठा
 कुर जी अवरगा द्वारा सररूप ही भोतर पधार ॥ उह रत्न प्रगट कोये ॥ तो पर जो व्र
 ज भक्तन को रत्न भावात्मक स्वरूप है ॥ ताको भावते श्रीठाकुर जी वसते है ॥
 और उपाय श्रीठाकुर जी के मित्तबेको नसो ॥ तो वेणु अत्यंत प्रीय है ॥ नाते को
 में श्रीहस्त में रपवत है ॥ कोहते ॥ नाते वेणु मधुरं कहे ॥ और वेणु में अति चातु
 र्य है ॥ जो भक्ति को संकेत इच्छा के वेणु द्वारा जतावत है ॥ और को निरुजाने
 अत्र कहे वेणु मधुरं ॥ पाको अर्थ ॥ जो श्रीठाकुर जी के चरणा कमल के वेणु
 है ॥ सो सबको चंद्रोय है ॥ सो प्रसिध है ॥ चरणा विंदकी रज के अत्र पवि
 ना संवंध विना स्सके प्राप्त नही ॥ कोहते ॥ जव पूतना व्रज में अर्थि ॥ सो १६६
 जा खालकन के प्रान उभे धोर श्रीनंद जी के धार अर्थि ॥ सो श्रीठाकुर जी

मधु॥ ने पूतना को मार ब्रज के बालकन के प्रान अपने हृदय में धरे ॥ सो उन बालक को
 श्रीगुरु जी को संबध मयो ॥ परंतु नीलास की प्राप्त नहीं ॥ ताते ब्रज को कुरु
 परवाया ॥ उन बालकन को संबध कराय ॥ उन को भगवद रस को प्राप्त कीनी
 श्रीरसपंचाध्याई में जब श्रीगुरु जी अंतर्धान मये ॥ तब ब्रज भक्त रोनि
 वेकों चले ॥ प्रथम चानचिन्ह को दर्शन मयो ॥ उररज को माथे पर धारत मये
 ताते रंग अति मधुरते ॥ अब कहें प्राणी में मधुरता को पहच्यते ॥ जो पान
 नाम हस्तको ॥ सो जो श्रीगुरु जी गोवर्द्धन धारन कीये ॥ तब धीन लो सं
 रूपाने दे को अनुभव करायो ॥ और वे गु नाद कर सबके मन हरे ॥ और वने
 रस्त उचो कर गायकों उलावत हें ॥ तथा सवान को उलावत हें ॥ तोमे ब्रज
 भक्तन को अने कभाव संकेत करत हें ॥ और नि कुंज ली लामें आना प्रकाश
 के भाव जाने ॥ तथा ब्रज भक्तन के कंठ में नाना प्रकार को धीला करत हें
 ताते पाणि मधुर करे ॥ अब पादो मधुर ॥ याको अर्ध ॥ जो लीलित विभंग
 रूप धार साक्षात् दर्शन करायो ॥ नांमे वाम चरणा को स्थिति सो तो उष्टि सह
 उष्टि रूप नाके अश्रित ॥ अन्यत वक्र पववृत्ति ॥ दक्षरा चरन कभलें यह ना
 वरे ॥ जो पुष्टि को स्थापन ॥ और मयी टाके उत्थापन सो अन्य ॥ तब ब्रज भक्त
 को अने प्रकार के भाव को अनुभव करत हें ॥ काहेते ॥ बंगार खीवता रस में
 को ककला में चोरणी वंधाई कें ॥ क्षरा चरणा कमल अत्यंत वधुरते ॥
 ताते एते केलस मभक्त सवी ज मर हे खत हें ॥ और अंत रंग सरी अर्पण
 कुच कलसन पर ॥ चरणा विंधारे कं पलाट त हें ॥ तब लील को मुध अ
 वतते ॥ तब भाति भाति के भाच उपजत हें ॥ दक्षरा पुष्टि चरणा को आ
 धय करत हें ॥ तहां दसन खचंड को चाप चिक भक्तन के हृदय रूप में
 जो अज्ञान हें जो रम को कैसे मि दंगे ॥ सादर कर के परभाव जानावते
 जो मनु अने अनुभव कर वे के निमित प्रगट कीये हें ॥ तहां चरणा कमल
 में अने क आभूषण घंघरू विद्यु वापार जेव ॥ पक्षुर आदि चैल कर
 मधुर सखत हें ॥ जब सब भक्तन के मन को खलन हें ॥ जैसे को रीरा
 जाल गई में विजय को जानत हें ॥ तब अने क वाजं त्व वाजत हें ॥ सो श्रीच
 रणा न के आभूषण को शब्द सुन वें ॥ मानो काम देव को नि सान वानि

सो मन को स्थित नही होत ॥ नाना प्रकार के विचार काने ॥ जो अथ काम
 देव कैसे करे ॥ कोन प्रकार चरणा कमल को संबध होय ॥ सो श्रीगुरु जी म
 धुर चाल कर अत्यंत शब्द कर कुंजन में पांडु धारत हें ॥ तहां सबन के अश्रुणा क
 रें ॥ श्री अंग के संबधते उन भवन को सो भा भरी ॥ सो एसे जो ललित विभंग
 हरे ॥ तिन को अनुभव करत हें ॥ पाछें उर उर दन रसा भावात्मक सख को उ
 छिलिन होय बाहर अनुभव करवेंगे ॥ या हर भीतर रस दान सख को दर्शन कर
 द अपा हो उबिधे कर सडक ठौर होय ॥ हृदय में कुठोर मये ॥ और अति अमृत हें
 नांमे अने क भाव का बोधन हें ॥ तब श्री स्यामिनी जी के कुच कुंज कुंज करके पूज
 त हें ॥ ताते चहुं अर लि त हें ॥ और चान कमल सधे स्थित होय ॥ सो अरु नाना प्र
 टन होसे ताते बक्र पायन होइ ॥ अरु नतल को यह भावते ॥ ब्रज भक्तन को अनु
 राग इकठोरोइ चालन में लागि होइ ॥ तहां चालन में चिन्ह हें ॥ ऐसी सौंदर्यता
 लावण्या मधुरता कमनीयता ताते सौंदर्य अगाध समुद्र को सो मोद सदीपता
 अरि ॥ जो परम प्रभवत हें ॥ चरन कमल प्रगट होत हें ॥ एक इत सौंदर्य प्रभवत भ
 क्त अनुभव करत हें ॥ ताते पादो मधुर करे ॥ अब चरन मधुर करे ॥ जो पर तो
 संपंचाध्याई में प्रसिधे ॥ जहां रस लीला करत हें ॥ निव्य ली लीमें अति चरुते
 जब सब आभूषण रंग रंगी में वज्र त हें ॥ सो सर्व धुन को धुन होय ॥ ऊपर देव
 ता वाजं चव जावत हें ॥ तहां रस को ये ॥ तब ब्रज सुधीन को प्रेमानंद भयो ॥ रस तो
 त्याकर प्रथमतो निव्य सिंघासन को रस देन कीये ॥ पाछें सुत सखान को चेर अ
 गिन कुमार कान को ॥ ऐसे यज्ञ योग सब को दान दीये ॥ और लीपिया श्रीयमुना
 जी को अधि क ॥ जाके ऊपर जित नीरूपा ता को उतने दान कीये ताते और जो
 लीला हें ॥ साथ तो ब्रज भक्तन के भोगार्थ हें ॥ राचस में वेग धुनते बुलाइ उनको
 दान कीये ॥ सो अत्यंत सख हें ॥ ताते चरन मधुर करे ॥ अब सारथ मधुर करे
 जो सख्यनाम पास प्रीत प्रेम होय ॥ ताको मंत्र करत हें ॥ सो पंचाध्याई में प्रगट
 दिखोये ॥ प्रथम मुली बजाय भक्तन संग रस कीये ॥ पाछें प्रीत लक्षणा प्रगट
 कीये ॥ परवि चारे जो मयव हो संयोग सुखा उभवते ॥ ताते रस को प्राप्त नही
 सो अविष प्रयोग दान तो न होइ ॥ ताते अंतर्धान को विचार करे ॥ जो अंतर्धान
 हें ॥ उर उर न के सरी स्थित रहे ॥ पाछें अंतर्धान होइ ॥ उनही के हृदय में भीतर रहे

मधु ॥ तब भक्तनने नदरे सो अत्यंत विरह भयो ॥ और में लीला करत न रूप भरे ॥ १६८ ॥
 को अनुभव कराय ॥ तब गोपीजन तो सर्व प्रथम ही समर्पन कर चुके ॥ तो तब
 मिव होऊ परस्पर श्री ठाकुर जी और भक्तन में ही ॥ ऐसे और कहें नाहीं ॥ तो तब
 मधुर करे ॥ पाछें मधुराधिपते रखिलें मधुरं ॥ सो पहलें करि आयो ॥ अब और कहे
श्लोक ॥ गीतं मधुरं पीतं मधुरं उक्तं मधुरं सुहृत् मधुरं ॥ रूपं मधुरं तिलकं मधुरं सु
 राधेपते रखिलें मधुरं ॥ **प्रायः** को अर्थ ॥ अब गीतं मधुरं ॥ जो श्री ठाकुर जी मान्य
 तहें ॥ सो तो मधुरे ॥ अतुं कवहू श्री स्वामिनी जो संग गान करतहें ॥ सो अति मधुर
 करतहें ॥ जवरास पंचाध्याई में उरुनी वजा उ गान कीयेतें ॥ तब त्रिलोको कर्माति न
 पाछें जव श्री स्वामिनी जे गान कीये ॥ सो सुन श्री ठाकुर जी चकत होइरहे ॥ सो रस
 निज अंतरंग सरस्त्री के अनुभव के याग्य हें ॥ ताते गीतं मधुरं करे ॥ अब पीतं मधु
 जो यामें अनेक भावहें ॥ जो सुख तो श्री स्वामिनी जी के अधरं नृत पानि न
 कवहू भावत नाहीं ॥ सग संग नौतन पीत प्रगट होतहें ॥ या प्रकार कोटि कंठि नोति
 तेतहें ॥ ऐसे रस रूप भावते अनुभव करे ॥ और पीत ना जो दावाग्नि को पान के
 सो भक्तन की रक्षा कीये ॥ और दूध आदि कपान कर के रस पान कीये ॥ ताते श्री ठाकुर जी
 भक्तन के सुरवेद नार्थ ही लीला करतहें ॥ ताते पीतं मधुरं ॥ अब धुत मधुरं
 जो सर्व भोक्ता श्री कृष्ण आपतहें ॥ और ब्रज भक्तन के भावरस रूप के मोता
 पतहें ॥ कैसं जैसं भ्रमर सारयाहीर ॥ जैसं उष्टि में मकरंद रस रूपत ॥ ताको पान
 करतहें ॥ तैसे श्री ठाकुर जी संयोग और विप्रयोग होइ रस को पान कीये ॥ और
 ब्रज भक्तन की भावरीत सो जो सेवा ताहू को पान कीये ॥ ताते धुतं मधुरं करे
 अब सुहृत् मधुरं ॥ जो अपने जन श्री स्वामिनी जी तिन के लाज धीरज विरह
 सबहें ॥ पाछें सब की रक्षामें न त्रय भयो ॥ कहते ॥ उनमें चैतन्य तारूप मनसो
 तिन को तो आपत लीये ॥ पाछें आपरक्षा कीये ॥ पाछें आप करे ॥ श्री कृष्ण नाम
 सक्त ॥ जो आपत भावरूप फल देव को पाव संपादन कीये ॥ और वियोगात्मक
 भायर आप दीये तब भयो कहते ॥ सो जो व को विच्छे अनेक काल भयो अब
 केसें मिहें ॥ तब विप्रयोगात्मक भाष प्रगट होय ॥ जव अंगीकार करनो विचारे
 तब ही विरह होय ॥ सो ब्रज भक्तन को विरह दान कीये ॥ और पुष्टि मा गे के साधन
 दीये ॥ ताते सब सब धैर श्री ठाकुर जी को जानै ॥ या प्रकार सब भक्तन की रक्षा

में तन्महें ॥ ताते सुहृत् मधुरं करे ॥ अब रूप मधुरं ॥ जो लीला तत्र भंग स्व रूप पान
 रस रूपतहें ॥ सो बहू दिक अगम्य स्वतंत्र वेदानतीत स्वरूप को वर्णन करतहें ॥ तब को
 अधिकांग अंगार सत्त्व कलीलो में नाहें ॥ ताते इत नो करतहें ॥ का पाद मुखादिक
 पुरुषोत्तम सार महारस रूपतहें ॥ और पर स्वरूप स्वामिनी भाव का के भोग का देयोगे
 काहेते ॥ अग्नि कुमार का कापि नो भाव भयो ॥ और ब्रज भेजे को मनी भावतेन ॥ त
 नही को या स्वरूप को अनुभव भयो ॥ ताते रूप मधुरं करे ॥ अब तिलकं मधुरं ॥ त
 लक जोहें ॥ सो सर्व सो भा मुखादि के दो ॥ ताको रस वेको इकठोर कोयेतें ॥ सो श्री
 स्वामिनी जी के सर के तिल क दीयेतें ॥ जो दूध न लगा ॥ और दुर्घ प्रिया श्री यमुना जी
 आपलगावतहें कस्तुरी को तिलक ॥ कवहू कुमकुम को धारतहें ॥ ताते अति ह्रा
 अग्नि कुमार का और जो ब्रज भक्तन ॥ तिन को अतुराग रूप आरत वारा ताभा
 वते कुमकुम को तिलक करतहें ॥ ऐसे ब्रज भक्तन को ज तावतहें ॥ जो नुमने रस
 अयली पोये ॥ ताते मधु म को पा भांति रस वतहें ॥ ताते तिल मधुरा रस रूपतहें ॥ तो
 तिलकं मधुरं करे ॥ अब मधुराधिपते रखिलें मधुरं ॥ जो रसमान श्री कृष्ण ही
 सो ऊपर करि आयो ॥ अब और कहें ॥ **श्लोक** ॥ कारां मधुरं तरां मधुरं तरां मधुरं
 तरां मधुरं ॥ समंतं मधुरं विमंतं मधुरं ॥ मधुराधिपते रखिलें मधुरं ॥ **प्रायः** को अर्थ
 अब करारं मधुरं ॥ जो श्री ठाकुर जी के मकरा कृत कुंडलन सहित जो करारहें ॥ तामें
 सारथ्य योग उक्ति को श्री भनिवे मरो ॥ का गीते उक्ति प्रगट भईतहें ॥ जो कुरल को
 अंत कोट रूय को सोभा ॥ ताको अनुभव ब्रज भक्तन करतहें ॥ और कुल को
 सारथ्य योग कहे ॥ ताको भाव यरहे ॥ जो जने की मुनि ॥ और भक्तन को भक्ति
 वरे ॥ अनंद भा चकार पाद क मुखे दशा ॥ काहेते जो एक अंग प्रति सब अंगतहें
 तैसे करी के पीत सबहीहें ॥ ताते जो भक्त मकरा कृत कुंडलन सहित करी को आ
 अय करतहें ॥ और जो सिद्धन करत ॥ तो मधुर मद कोर को कहते ॥ काहेते उक्ति में
 रस नहीं ॥ भक्ति में रसना को नाम मधुरतहें ॥ सो उक्ति में श्री कृष्ण को स्वरूप नद
 नाहीं ॥ जानो को भावना ते उक्ति देतहें ॥ ताते करारं मधुरं करे ॥ श्री स्वामिनी
 जी के रूप में २ भावहें ॥ एक योगात्मक ॥ विप्रयोगात्मक ताके भोक्ता श्री कृ
 ष्णहें ॥ ऐसे करी हरा होय रूप में जाय ॥ सो रूप पान के सो मा देख कापि का
 ठोर रहे ॥ ऐसे कुंडलन सहित करी अत्यंत सोभा देतहें ॥ ताते कारां मधुरं करे

॥ मधु ॥ अवकते तरांग मधुरा जो सुरति संध में तराते हैं। तराता तो श्री गुरु जी
॥ १६४ ॥ और ब्रज सुदोह तरांग हैं। सोने कुंज मंदिर में विहार करते हैं। जैसे मत्त
 स्ती करणी संग विहार करते हैं। सो परस्पर तरा नहों मानत। और उषी त मत्त
 अपा संख्या त संबंध करके जैसे मीन जल में मन करे नैसे स्वामिनी जो स
 हित मन करते हैं। ताते तरांग मधुरा करे। अवकते तरांग मधुरा जो तलित
 भंग स्वरूप है। देव के श्री स्वामिनी जो लाजा विवेक धीर ज सव रह जाते हैं
 और कदपी वीर कर भस्म होत है। और स्वामिनी जो के दुःख रती हैं। और वस
 हसन कुमारिका के कर निराव्रत नापा को दूर कर रसदान की। तिन के सवे नाम
 निदोये ताते तरांग मधुरा करे। अवरमरांग मधुरा जो अने कनि कुंज नमो
 ज भक्त न संग मन काते हैं। कलि दो दुता पास्त मनु चंति पशु अज्ञा गोप
 कन्या। यत्प्रह्लाद मान पुरा न में अति न को दही न भयो। पाछे जब ब्रज विषे ला
 ला संबंध भयो। तहां निवुंज न्यार न्यार रहे। तहां शकाल में सवन सो विहार काते
 और जब दो उस्वरूप कलि में लीन होय जायेतें। जैसे मत्त हस्ती तरांगी संकर म
 करे न भिर्यत। अममपोदि तु मंग सग धृष्ट स्वज। स्वके ज कुं कु मरं जि सापः
 गंधर्व याली भर्तु दुतः अविशहा अंतो ग जा भिर भरा दिव भिन्न सनु। जैसे
 अमर्षा दारित सो र मन करतें। ताते तरांग मधुरा करे। अव विभित मधुरा
 जव श्री गुरु जी मायन चोखे को गोपिका न के घर जाते हैं। तव किं कारी
 शब्द सुन गोपो पकर को आवतें। तव दूध के कुर ला काते हैं। तव गोपिका
 न के उर नेत्र में दूध भा जाते हैं। तव गोपी मय होय छाडी रह जाय। तव अप
 योग भाग जाते हैं। तथाने कुंज में श्री स्वामिनी जो संग विहार करतें। और
 रजव दो उस्वरूप में लीन होय। और श्री स्वामिनी जो तो सवे सर्म न कीपे ता
 ते नाना प्रकार की सामि श्री सिध करार खतें। सो परस्पर खेतें। ताते दो उ
 स्वरूप को एक ही जानने। सो दो उ न के अरेगे पाछे जो वचे हो। ताके विमंत म
 धुरा कहिये। सो साखी जन के भागार्थ हैं। ताते उष्टि मार्ग की रेत त भोग धरतें
 तस दो उ स्वरूप आरोपतें। सो महा प्रसाद तेर सा नु भवताने। ताते विमंत मधुरा
 अव सभित मधुरा जो श्री गुरु जी की सव ऊपर करुणा इष्टि सप हृष्टि के
 ई मान अपना न करे। पर श्री गुरु जी की सव परा रूपारी करतें। कोरेत। रतना

स्तन विषे विषल गारु के अरे। सो सा हो को माता की गति कोनी। और रं रं उर
 च गा के। पर सर्व दोष समा करे। ताते सभित मधुरा करे। और राज ब्रज भक्त को
 जैसे भावते ता को न नौथ परन कोपे। अव मधुरा धिपने रियल न धुरे पाको
 अर्थ ऊपर कहि अपेते हैं। प्रथम और करतें **॥ १६५ ॥** उजा मधुरा माला मधुरा य
 उना मधुरा वीची मधुरा। सलित मधुरा क मने मधुरा। तपु गी धापो न रियल न धुरे
॥ १६६ ॥ याको अर्थ। अव उजा मधुरा जो पर भक्तन के स्वरूप त्म क पदायते। ताते श्री
 गुरु जी को अंत्य त प्रिये हैं। ताते अपने कट में राखतें। सो गुजोपे अहरा दो
 सतें। सो श्री स्वामिनी जो को लहेतें। और अहरा ताके नो चेषाम ताते। सो तुप
 प्रिया को भावते। और स्वत उजा श्री चंद्रावली जो और ब्रज भक्तन को भावते। ताते
 उजा मधुरा करे। अव माला मधुरा जो वैजंती माला जो ब्रज में कोटा न कोट
 भक्त हैं। तिन के भाव को अंगीकार। ता न प्रकार के पुष्य कोट ब्रज भक्तन के पृथ
 सां अने क कथा कर वृं लं वाप मान चान कमल ते श्री कंठ नारि। जो भक्त को जा
 अंग में अंगीकारे। सो ज नावतें। ताके मध्य माली माली को माला चोको
 धोव संला छन को स्तन श्री कंठ ये उरव्य भक्त। सरोपनि मध्य में श्री स्वामिनी
 जो अदि चतुर्थ पृथ सवन को भाव जानने। ताते माला मधुरा करे। अव य
 उना मधुरा करे। जो श्रीपमुना जी तो अति मधुरे हैं। स्व लीला श्री यमुना जी
 के निकट तोते हैं। और सदा श्रीपमुना जी संग विहार करतें। और अग्नि मुभा
 रकान को संबंध नु मही करके भयोते। ताते जो कोई तु म्गो अाप करे तिन
 को अलौकिक कहेती सिध करतें। और रास धोला ब्रज भक्तन संग काते हैं। तव
 रसको अंग में प्रसेद होत है। सो रस श्री यमुना जी में है। और श्री यमुना श्री गुरु
 रजी और ब्रज भक्तन की लीला अनुकूलतें। नाना प्रकार के संकेत काते हैं।
 ताते श्री लक्ष्म को और ब्रज भक्तन को अंत्य त प्रिये हैं। ताते पमुना मधुरा करे
 अव वीची मधुरा करे। श्री यमुना जी में तरंग भ्रम उठतें। सो मानो श्रीपमुना
 जी के हस्त कमल में हैं। जैसे ब्रज में कोटा न कोटन। ताते तैसरी श्रीपमुना
 जी को रंग रूप उजा ह के टानि कोटि प्रगाढ करके। ब्रज भक्तन सो श्री गुरु
 जो संबंध करावतें। ताते जो श्री यमुना जी की तरंग उठतें। सो अने क
 भक्तन के मन को हरतें। ताते परत न नावतें। जो तुम रा आर के पात को

मधु ॥ तोरसको अनुभवतेय ॥ याभातिपुष्टे मागीको द्वालीनासं वधं करवतरे ॥ तातेय
॥१००॥ चानधुराकरे ॥ अक्सलिलं मधुरं ॥ जोनुकारेजलमें नाना प्रकारके भ्रम करवतरे
 साक्षातबुलइव अमजलमहारसको धारते ॥ तातेसलिलंमधुंकरे ॥ अक्सलिल
 मधुरं ॥ जोश्रीयमुनाजीमें नाना प्रकारके कमल फूलरहेते ॥ तिनमें भ्रमरसपात
 करते ॥ जैसे अनेक भक्तनके भावको श्रीकृष्णपानकारके सर्वे छापते ॥ और
 यरश्रीपुनाजीको जनावतरे ॥ नाप्रकारमें ब्रजभक्तनको रारवतरे ॥ नदोके
 श्रीपुनाजीके संगसादविराकरते ॥ औरकमलमें श्रीलक्ष्मीजीको वासते ॥
 नामे परसचन करते ॥ जोलक्ष्मी औरनारपनश्रीपुनाजीके लटपार श्रीपुने
 कोरते ॥ श्रीस्वामिनीजी औरश्रीकृष्ण यमुनाजीमें जोनि कुज मंदिरते ॥ तारासदोवि
 हरकरते ॥ सोकमल जोलक्ष्मी तिनके संगभ्रमर अथवा श्रीकृष्णको श्रीयमुना
 जोलुतकरते ॥ श्रीयमुनाजो ज्यपतिहे ॥ तारा नाना प्रकारको कपोदनेहे ॥ सो
 कोदानको रिसरचरीते ॥ औरदेवतापुष्प सुगंधवधीबतहे ॥ तिराकोरस श्रीकृष्ण
 अथभक्तनके श्रीअंगके प्रसद तिनमें अंगजाकुमुमसरित ॥ श्रीपुनाजी
 मेरे ॥ सोसवसौरभ इकधरेरोय ॥ श्रीपुनाजीमें व्याघ्ररोरहेते ॥ ताराभ्रमरउजोर
 करते ॥ औरभक्तानकरते ॥ सोमानो परमउत्साह होइरयोते ॥ पस्त्रीजमुना
 मेजोपदाधरे ॥ सोसवश्रीकृष्णके संबंधीते ॥ ऐसीश्रीपुनाजीविनाकबहुसिध
 नहाप लक्ष्मीको आश्रयकीयेहे ॥ तातेकमलंमधुंकरे ॥ अक्सलिलंमधुरं
 एखिलंमधुरं ॥ पाकोअर्थउपाकरते ॥ अक्सलिलंमधुरं ॥ **साकापीरोमधुरानी**
याकोअर्थ ॥ अक्सलिलंमधुरंकरे ॥ सबभक्तनको मुकटमनिगोपीजनने ॥ श्री
 ठाकुरजीको गोपी अतिप्रीपते ॥ औरएकझागाहं जुही नहीतोते ॥ औरब्रजभक्तनि
 बुंजमें श्रीस्वामिनीजीको श्रीठाकुरजीको अनेक संकेतकरते ॥ नराधिराली
 लाकरते ॥ नरागोपीजन श्रीठाकुरजीको जसकीये ॥ तवस्वामिनीजीके ॥ जोहे
 प्राणप्रियतुम अतिमुदरके ॥ ताते सुरतातरमरीमें मेरो अंगारभयो ॥ सोअव
 मेंकेतेकरे ॥ मोकोसधीदखंगी ॥ तवश्रीठाकुरजीअपनेहस्तकमलते ॥ श्री
 स्वामिनीजीको अंगारकरलगागे ॥ सोअथकोसोभादेख अरुजानते ॥ तव
 स्वामिनीजीके वेगको मेरोसधी आवतरोइगी ॥ तवश्रीठाकुरजीअंगारकीये

पक्षंसधीअरि ॥ श्रीस्वामिनीजीको अंगारदेरसनेन नमेंकरते ॥ अपनीसन
 सो जोपरअंगारमेरोसधीकोनहोते ॥ याभाति संकेतअनइपावत ॥ औरएत
 स्वल्पश्रीठाकुरजीके श्रीगोपीजनके अनुभवयोगते ॥ तोलगोपीमधुराकरे अ
 वलोला मधुराकरे ॥ जोलीलारास जन्मतेकीये ॥ ब्रजमधुराकरेमे लोलाके
 पाछे अंतर्धानलीलादिसोये ॥ तोभंगोपी जगाकोलीलाको मधुरसकरते
 वेदसास्त्रको अंगम्य मर्पादारहत ॥ अर्थहारेसोअन गजबजकीनादि सुतेसेज
 विवे काकलाकोसर्वचातुरीजाकीछयाते प्रगटभयो ॥ सोलोलोद्वयकादलको
 रकामरीनमोहतभये ॥ तातेसवलोलामें अंगारनि कुंजलीला मुरायेहे ॥ तेलो
 लामधुराकरे ॥ अक्सलिलंमधुरंकरे ॥ जोकारागाइराकायेतेतेते ॥ कारगातोपु
 छिउर्वतेन तातापुछिलीलाप्रगटकीये ॥ जोलीलाहे सोसवभक्तानी ॥ मारव
 चोरलीलामें मरजताये ॥ जोगोपीजनको सामिग्री अंगोते ॥ तातेउनकोअ
 पनेमेंलगाइ ब्यसने अक्सलिलंमधुरंकरे ॥ तातेअक्सलिलंमधुरंकरे ॥ अक्सलिलंमधुरं
 पंचाधरिमें श्रीशुकेदेवजीसो राजापरिक्षनेने प्रल्मकीपरे ॥ जोरनगोपीनका
 मभावकरके भजने मुक्तिपाइ सोको ॥ तवश्रीशुकेदेवजीके ॥ जोरनकोसामु
 क्तिकाहकोनहीभरे ॥ करेतेविष्णुपालजन्मरोते श्रीकृष्णकीमिहाकीने तोह
 मुक्तिभरे ॥ औरगोपीजन तो सर्वसर्पनकीये ॥ तातेपूरीपर्येनभकेस्वरुपा
 नंदकोअनुभवभयो ऐसीमुक्तिभरे ॥ श्रीभागवतमेंकेये ॥ मुक्तिनामवाके
 जोपीछेदुखकेशकषुनहोया ॥ सुखकीपेकेकाव्यजोकोरेसाधनोसिधन
 होया ॥ तातेभंगीजनकोरसडक्तिभरे ॥ तातेअक्सलिलंमधुरंकरे ॥ अक्सलिलंमधुरंकरे
 जहृषनाम कदास सोब्रज भक्तनलीभाति सोरुजा नने ॥ कहते ॥ श्रीगुरुजी
 कोअंगव्रजभक्तनसोमिलतरे ॥ तवसीतलतेय ॥ और १ साराकेअंतराएमें
 विरहकारघातेराजाय ॥ तवपुष्पमाधोमाधोरते ॥ जोकवह अपनेकोरुस
 जानराधारघाउकारते ॥ औरश्रीकृष्णविकलरोयअपनेकोराधाजानकृष्ण
 कृष्णउकारते ॥ परहसादेरवसखिनको धीरजछूते ॥ जोरनकोकेसंसमरौवे
 सेहृषभेंसमपते ॥ तातेइहंमधुरंकरे ॥ अक्सलिलंमधुरंकरे ॥ अंगारसकी
 सबसामिग्रीअधुरे ॥ श्रीवलदेवजीकोसंबंधउहलीलामेंनहीं ॥ कहते
 निकुजमंदिरमेंपशुपथीकुमवली चंद्रमाजितनी सामिग्रीते ॥ सोसवते
 अरिरे ॥ नरासवंपक्षीहे ॥ सोअनहीके कारेजगते ॥ तातेउनको आश्रयविना

॥ मधु ॥ और के अनुभव में न आवे। तब परस्पर स्थित नारी जाननी। तब परस्पर मधु के
॥ २०५ ॥ अवमधुराधिपते रखिते मधुरा। याको भाव ऊपाक रहे। अथ और कहते हैं। **॥ अथ ॥**
 जोपा मधुरा गावो मधुरा यष्टि मधुरा अष्टि मधुरा दलित मधुरा फलित मधुरा
 मधुराधिपते रखिते मधुरा। **॥ याको अर्थ ॥** अवगोपा मधुरा करे। जो अगारस
 में स्वयं सखी नको वही नको पड़े। और गोपा स यको नासिके। तो कितने मधुर
 रंगी मत्त हूँ। सो या प्रकार जानने। जैसे श्री ठाकुर जी गोचार नको पधारें। न
 वज्र मत्त वनको लीलाको अनुभव घरमें कोये। या प्रकार गोपी अनुभवका
 तहें औरगतको निकुंजमें घरमें पधारतहें। तब अंतरंगी सखा निकुंजकी ली
 लाको अनुभव घरमें करतहें। तब सखा हरसके अनुभव पोगे। तब गोपा
 मधुरा करे। अथ कहें गावो मधुरा। जो श्री स्वामिनी जी अपने गान करके श्री
 कुरजीको विरह कैसे तसहोतहें। तिनको सीतल करतहें। जैसे अग्निने वनका
 कसप उरजातहें। तब अष्टत वर्षीय प्रफुल्लित करतहें। जैसे श्री स्वामिनी जी
 करतहें। तब गोपा मधुरा करे। अथ यष्टि मधुरा करे। जो यष्टि लकुटीको नाम
 हें। सो अति मधुरे कैसे श्री ठाकुर जी हस्तमें राखतहें। दा नादिक लीला में तब
 माखनको मटकी छीकेने परकलें लकुटते। जो श्री ठाकुर जी तो श्री स्वामिनी
 जी पे आसक्तिहें। सो लकुटीले यह अभिप्राय जतावतहें। जो मे तुम्हारे साका
 नहीं। और गारनको लकुटीते घेसतहें। तब यष्टि मधुरा करे। अथ अष्टि मधुरा
 जो अष्टि मधुरा मंगले मरुजे और सो में जो जी वेदें। सो सब भगवदसं वंधीहें। त
 में भेदहें। कारेने। वज्र में के सांष्ट्री ठाकुर जी सो वेर करने। सो इनको स्वह
 पानंदको अनुभव नारें। हृदयमें दुष्ट भाव भसीहें। एक श्री ठाकुर जी में सब भ
 वको पड़े। नाना फलितकारी जोहें। सो सब को त्याग कोये। श्री ठाकुर जीके स
 न्युव भर। कारेने वज्र में अनेक स्थितिहें। जिनको जैसे अधकार तैसे नितो
 समि रोध लक्षणमें श्री आचार्य जी कहतहें। नंदयसदा और रूढ़ गोपी जनको
 विरोध बाली नके भयो। तब परमार भावको प्रणी करेगे। या भाव तो नरोध
 भयो। सो गुरु संकीरन सो अनुभव करायी रोध कोये। या प्रकार न्याय न्याय
 अष्टि जानने। तब अष्टि मधुरा करे। अथ दलित मधुरा करे। जो हिंसात्मक
 स्वरूप परमार सारहें। कारेने प्रथम दलने श्री प्रणी प्रथम तिनको जबरम
 की रक्षा भई। सो वसिमें हमरो बल विप्रयोगात्मक प्रगट भयो। सो स्वरूप परमार

नमके समान नहों। महारस रूप स्वीरूप। कारेने स्त्रीरूप विना अंगारस्तरोमा
 नदेइ। तब सयो गदल श्री बाकु र्जी। प्रो विप्रयोगदल श्री स्वामिनी जी अ
 दि रूदावने मारस रूप भूषण तहां सस्वीनिकुंज सिधका तहें। कहना ना प्रकार के
 उष्य वृक्षानिकुंजतरा पक्षी वोलरहें। पर मसो भाषा नान गनर। ताके बोचके लि
 सि ज्वा ताके और और प्रोजी तयां प्ये प्रमा गुजतहें। सो स्त्री भावको पायेहें। और
 निकुंज में पशु पक्षी स्व स्त्री रूप रूप जानने। पर सो निकुंज ताके आभास अथ क
 द्वं वरयो पर अदि जिनको देव भोहित होतहें। कारेने वृत्त पृथकको भगवत्सं
 बंध करके अधिकार नती। रे सरस रूप व्रसते। तिनके उपर लता छा रहतेहें
 नहां स्वामिनी संग श्री ठाकुर जी विहार करतहें। तब मधु घृहको मधुसे सो अगने
 जानो संग्राम में दे वीर युद्धका तहें। अथ वानुपे सारित मत्त गज गजको लीला
 करतहें। तब कुंजको वंदरहें। और माला हरतहें। अंगम अल विस्तर विपरीत
 रमराखिये कोरु कामदेवके मटके मटके नरोतेहें। तब दलित मधुरा करे। अथ फलि
 त मधुरा करे। पर स्वरूपा नुभव जाको भयो गोपा सोरि जो नगा। सो श्री गुसांजी
 श्री आचार्य जी सो विना प्रकरतहें। जो मयह रसके यम्य नहीहें। पर अपने नि
 वेदन कायेके यह जो। नुहोरो सर्व स्वध नहो। सो मको फलित कोये। सो पर अ
 पके उय द्वा फलित भयो। तैसे ही जो भेरे भनके। तिनको नुहोरो चरता में हृदभा
 बहे तिनको फलित होउ। कारेने जो अप्रगट नहोते। तो परते वेदन श्री अष्टि
 मार्गको फल नहोते। रेसे श्री ठाकुर जी स्वामिनी जी। मधुर लीलाके पति सकका
 लने में सर्व लीला करनको समर्थहें। और सयो गाम्भक और विप्रयोगात्मक हम
 से निसाधनको अपने जानके दान दीये। तातह मता अपके चरन जको नमस्कार
 करतहें। या प्रकार श्री गुसांजी विज्ञो प्रकर। अपने अंगीकृत जी वनको सिधाय
 जोपा प्रकार हृद अथ प करेगे। तब फल मिलेगे। और श्री गुसांजी तो दो कामें
 वरुन विस्तार सो लिखेहें। सो में अपने बुध अनुसारनके प्रबोधये। तही में
 तेक छक भाव। श्री गुसांजी श्री विद्वल नाथ जीके चणिक फलेके आश्रित दोपरे
इति श्री मधुराष्टक सटीक भाषा में संपूर्ण ॥ अथ गो कुलाष्टक सर्व कलि बत
 तहां प्रथम श्री गुसांजी श्री आचार्य जीको नमस्कार करतहें। **॥ अथ ॥** तब श्री
 चार्ये सर्व स्व लीला हृदय परितः। नमः श्री विद्वल प्रभुः चरनो रणु मता निधिः
याको अर्थ ॥ अथ श्री हरि राय जी कहतहें। जो हे श्री आचार्य जी में नुहोरो चरन

गोकु. ॥ कमल को मे वार चरन मस्काकारत हं ॥ श्री श्री आचार्य जी उने कसे हे ॥ तुम्हारे
 २०२ ॥ इय श्री ठाकुर जी की लीला रस रूप स सुद्र सो भिररयो हे ॥ सो अच्युत रस रूप पान क
 रे वे जल्प श्री गुरु सांई जी प्रगुभये हे ॥ सो आप जे से श्री आचार्य जी से व क न को स
 को ये ते से आप कर त हे ॥ ऐसे परम रूप पाल श्री गुरु सांई जी हे ॥ तिन के चरन कमल को
 मे नमस्कार करत हो ॥ पासी आश्रय ते गोकुलाय क की टीका करत हो ॥ कोरे न यो
 श्री गोकुल संवो श्री ठाकुर जी के नाम हो ॥ सो न्यो न्यो करत हं **श्लोक** ॥ श्री म
 कुल सर्व स्वं श्री मद्रोकुल मंडनं ॥ श्री मद्रोकुल इकतार श्री मद्रोकुल जीवन
याको अर्थ ॥ अथ प्रथम श्री मद्रोकुल सर्व स्वं ॥ जो श्री गोकुल जो हे ॥ धोर तना के
 र्व स्व श्री ठाकुर जी हे ॥ ता हो ते या नाम में श्री र सकेत जानने ॥ गोकुल श्री गोकुल न
 य गोकुलाधीशदि ॥ श्री ठाकुर जी को गाय वदुत प्रीय ॥ ताते श्री गोकुल अति
 प्रीय हे ॥ श्री र संध्या से मे जव गौ चारन को श्री गोकुल अति हे ॥ त वरि वरु मे जो
 दोरत हे ॥ तहां व्रज भक्त गाय ड रा वन के मिस आवत हे ॥ ताते श्री गोकुल अत्यंत
 प्रीय हे ॥ श्री गोकुल के सी हे ॥ जहां वान लीला तो प्रसिद्ध हे ॥ जिन के अंतर मे
 किलो र लीला रस लीला हे ॥ जैसे आदि वृंदावन में रास लीला विहार लीला प्रसिद्ध
 तहां वान लीला हे ॥ भगवद् गीते हे ॥ गिरधर लाल पालने हुं दे ॥ कोरे ते कतंगि
 धर लाल कहां पालना ॥ ते से पालना में श्री गुरु सांई जी के हे हे ॥ मान नी मान हं
 श्री य सोदा जी पालना हुला मत हे ॥ ता ही से मे भक्त नको सर्व लीला को अनुभव
 जता वत हे ॥ ताते श्री मद्रोकुल सर्व स्वं ॥ श्री गोकुल में य सोदा घाटे हे ॥ तहां
 वान लीला प्रसिद्ध हे ॥ श्री ठाकुर जी घाटे पे दान लीला मुख्य हे ॥ ता ही ते श्री गुरु
 री जी दान लीला प्रसिद्ध हे ॥ ठाकुर जी घाटे पे श्री गुरु सांई जी से ध्या करे लीला
 को अनुभव काते ॥ सो दान लीला श्री गुरु सांई जी अपवर्ग न कीये ॥ तहां अपनो स
 रूप जताये हे ॥ मुदा चंद्रवल्या कुसुम सयनी बाहिर चितं ॥ यर भाव कर ठाकुर
 जी घाटे दान लीला को ठिकानो हे ॥ श्री गुरु सांई जी घाटे पहार को ठार हे ॥ ताते श्री आ
 चार्य जी तहां वि आभ करते ॥ से ध्या वेदन करे ताते र मरा स्थल के हे ॥ श्री य सोदा
 जी के अंगन में वान लीला कीये ॥ श्री गुरु सांई जी श्री यमुना अरु पद्मे में करे हे ॥
 जो इग चाक्षुष विहारय ॥ जो रासादिक लीला निव्य विहार होत हे ॥ सो विनाय
 धिकार अनुभव न होय ॥ ताते श्री गोकुल में श्री ठाकुर जी सर्व लीला करत हे ॥ या
 हीते श्री आचार्य जी चत्र सो की मे करे हे ॥ गोकुल स्वापादयो स्मरणां भजनं च

गिन न्यां न्य मिति मे मति ॥ ताते श्री गोकुल परम रस रूप हे ॥ या ही ते श्री मद्रोकुल
 सर्व स्वं के हे ॥ अथ श्री मद्रोकुल मंडनं ॥ जो मंडन रसा कावे को नाम हे ॥ श्री ठाकुर
 जी श्री गोकुल को रक्षा करत हे ॥ सो सो श्री भागवत में प्रसिद्ध हे ॥ ना दुस्न को मार सर्व
 विघ्न दू कोये ॥ श्री र रक्षा प्री कीये ॥ अथवा श्री गोकुल भक्त हे ॥ सो सब को रक्षा में त
 त्यर हे ॥ कोरे ते अनेक व्रज भक्त श्री गोकुल में रहते हे ॥ श्री गौर रहते हे ॥ तिन को रक्षा
 श्री गोकुल करत हे ॥ ताते श्री मद्रोकुल मंडनं के हे ॥ अथ श्री मद्रोकुल इकतार
 जो श्री गोकुल के नेत्र रूप श्री ठाकुर जी हे ॥ व श्री ठाकुर जी के नेत्र में जो रयापनारा हे
 ना को पुतरी कहत हे ॥ सो बहुत प्रीय हे ॥ पल कर रक्षा करत हे ॥ ऐसे ही श्री गोकुल
 प्रीय हे ॥ काहे ते भगवद् रूप हे ॥ तहां कोरे फरे गोकुल को प्रीय हे ॥ तहां कहत हे
 जो श्री गोकुल में श्री स्वामी नी जी प्रथलीये विराजत हे ॥ श्री श्री यमुना जी निज
 प्रथलीये विराजत हे ॥ सो कीर्तन नये के हे ॥ श्री गोकुल निज कटव सत हो लहर
 न को छवि अथि ॥ ताते सर्व लीला श्री यमुना जी सो मिल करत हे ॥ सो जैसे नेत्र को
 रक्षा पलक करत हे ॥ तैसे रन दो नो स्वरूप न को जानत हे ॥ ताते नेत्र वत हे ॥ ताते श्री
 मद्रोकुल इकतार के हे ॥ अथ श्री मद्रोकुल जीवन ॥ जो श्री गोकुल के जीवन
 प्राण सुषदायक श्री भागवत गीता में के हे ॥ जो जहां मेरे पकरत हे ॥ नहां रहत हे
 ताते श्री गोकुल में सब भक्त न की चूरा भाति व्रज भक्ता हे ॥ भक्त के जीवन
 श्री ठाकुर जी हे ॥ श्री ठाकुर जी के जीवन भक्त हे ॥ ऐसे ४ नाम को अर्थ भयो **श्लोक** ॥
 श्री मद्रोकुल मोत्रे स श्री मद्रोकुल पालकः ॥ श्री मद्रोकुल लीलाधी श्री मद्रो
 कुल संवयः ॥ **याको अर्थ** ॥ अथ श्री मद्रोकुल सर्व स्वं मात्रे स ॥ जो श्री ग
 कुल में आश्रय रूप श्री कृष्ण हे ॥ तिन के आश्रय सब सर्व संसार हे ॥ पाभा वने जो
 गोकुल को आश्रय करत हे ॥ तिन को क्लेश नही होय ॥ काहे ते श्री गोकुल मूल
 भूत हे ॥ जहां श्री ठाकुर जी रास लीला करत हे ॥ ऐसे श्री गोकुलाधीश को आ
 श्रय करतो ॥ नामे श्री मद्रोकुल मात्रे स के हे ॥ अथ श्री मद्रोकुल पालक श्री ठा
 कुर जी श्री गोकुल के पालक हे ॥ अथ या जो श्री गोकुल को आश्रय करे
 तिन को पालत हे ॥ उन के मुखते आप सुख पावत हे ॥ श्री श्री गोकुल भक्त हे
 सो श्री ठाकुर जी पालन करत हे ॥ श्री ठाकुर जी के लीला नाम में मनो दी होत हे ॥
 ते से ही फल फूल सामि श्री सिध कर देत हे ॥ श्री सब को रक्षा करत हे ॥ सो श्री भा

गोकु ॥ सोभा श्री ठाकुरजी तेरे ॥ और श्री ठाकुरजी की सोभा श्री गोकुल तेरा ॥ साक्षात्
॥ २०४ ॥ जो कालिंदी के तीरे नाना प्रकार की लीला करते हैं ॥ ताते श्री ठाकुरजी अत्यंत सो
 भा देते हैं ॥ सो ब्रज भक्त वैसे हैं ॥ जिनकी उपमा को जो चुप तो स्त्री को रिनाही सो
 भगवद् गायते हैं ॥ सो प्रभृति जे ती जग युवनी बाहि फेरा रोने रूप पर ॥ सो सी श्री
 मिनी जी संग श्री ठाकुरजी सो भा देते हैं ॥ सो श्री गोकुल को सो भा दिखल ह्मी स
 हित नाना यन वैकुण्ठ छोः ब्रज के ब्रह्मन के यान नमें व्यापि रहे हैं ॥ देवतान के लो
 क सो भा हेरवल जग पावते हैं ॥ और जाहिने प्रभू गोकुल में पधार ताहिने ते ता
 ने लो क की सो भा गोकुल में आरही ॥ और लह्मी अपने पति पधार जान अपुन
 ताहिने ते स्व कह डव न भयो ॥ नहरण जी अपनो भंजार लुटायो ॥ फेर जो को स्था
 र गयो ॥ ताते श्री गोकुल में भूयरा श्री ठाकुरजी ॥ ऐसे सब ब्रज भावात्म करे ॥ परम
 सुंदर है ॥ ताते श्री गोकुल सौंदर्य करे ॥ अब श्री मद्रोकुल सत्फल करे ॥ जो श्री
 गोकुल के पति श्री कृष्ण हैं ॥ सो सत्फल को दान करते हैं ॥ और अन्य स्व ताके अ
 ध्यते सत्फल नही होते ॥ ताते जो कोरि स्व गेलो क की कामना कर ॥ मरि तप
 होमादि करते हैं ॥ पाछे देवतान के लोक में जायें तो जहां डरवरे ॥ सो अन्य श्री
 नभये पाछे फेर ससार में अवतरें ॥ ताते माया के गण नही छूथें ॥ ताते सत्फल
 और श्री गोकुल के आश्रयने श्री कृष्ण स्मृतां संबंध होते हैं ॥ जैसे रत्न आगी छुटि
 मार्गी हैं ॥ तीन को श्री गोकुल को आश्रय श्री कृष्ण को सबंध कवरोप ॥ जब
 श्री आचार्य जी श्री गुरु जी के अनकमल में भावते ॥ तब यह आश्रय
 सो यह सत्फल है ॥ अब श्री मद्रोकुल गौरा ॥ सो गोकुल के जे प्राने हैं ॥ वे
 सो गोन के रक्षक श्री ठाकुर जी हैं ॥ गोकुल सेवाते श्री ठाकुर जी अप्रतिप्रसन्न रहते हैं
 और गौना मंडी न को है ॥ सो जे मंडी न को प्रान श्रीपते ॥ प्रान के आश्रय
 रंदा के आश्रय अननही ॥ तैसे श्री ठाकुरजी के आश्रय गौठा कूल हैं ॥ और
 गौनाम पृथ्वी को है ॥ सो पृथ्वी रूप श्री पसोदा जी है ॥ तिन के प्रान श्रीप श्री ठाकुर
 जी है ॥ सदा रक्षा करते हैं ॥ घर में जो पदाथे ॥ तिन में श्री ठाकुरजी को विनयो
 काते हैं ॥ और गौनाम ब्रह्म न को है ॥ जो ब्रह्म को देखें ॥ उनही को आश्रय को
 और श्री गोकुल में तो प्रणी ब्रह्म विराजते हैं ॥ ताते प्रानी मात्र के जीवन श्री
 ठाकुरजी है ॥ सो श्री गोकुल के आश्रय विना श्री ठाकुरजी को आश्रय न हो

और गौनाम अक्षर को है ॥ जरा श्री ठाकुरजी विराजते हैं ॥ सो अक्षर भक्तों ॥ स
 व भक्तन को नाम गोकुल है ॥ ताते भक्त के दृश्य में श्री प्रभू सदा विराजते हैं ॥ ताते
 भगवद् की सेवा प्राप्त करे ॥ श्री ठाकुरजी के प्राप्ते ॥ सो भक्त सिरा मन ब्रज भक्त
 हैं ॥ जिनके प्रान श्री कृष्ण हैं ॥ सो ब्रज भक्तन के चरान को आश्रय को ॥ सो सबी
 उभव होय ॥ ताते श्री मद्रोकुल गौरा करे ॥ अब श्री मद्रोकुल काम ॥ जो म
 र्ग गोकुल के भेनाथे प्ररन कर्ता श्री ठाकुरजी है ॥ और काम धेनु कल्प अक्षि
 ता मारो यह मनाथे प्ररन करते हैं ॥ जो पेलो लौकिक कामना प्ररन करते हैं ॥ लौक
 पोयते अन्यत दुख होय कोले ॥ देवलो क में रंदा जहां रहते हैं ॥ ताका धेनु क
 ल्प अक्षर अमृत पम करते हैं ॥ पंतु अपने राज्य के लीयें अति दुखो ॥ सो नाग
 वत में प्रसिधे ॥ सक्षसन के म पते रंदा बु ब छोः पधार के कराले श्रपत हैं
 ताते इन के पोयते निभय नही होत ॥ और श्री भागवत में जहां स्प मन क मारो
 को प्रसंग है ॥ नहां मारो के लो भने श्री ठाकुरजी सो क भाव धरो ॥ न व स देह अ
 प्रये हैं ॥ ताते इन की कामना पूर्ण में अन्ये दुखे हैं ॥ श्री ठाकुरजी है सर्व
 मनाथे के प्ररन कर्ता ॥ ताप दुख दूर कर स्वस्थान दे को अनुभव कावते हैं ॥ सो
 श्री गोकुल में रहै ऐसे चिंतामनि को आश्रय को ॥ तो निभय होय सब मनाथे
 प्ररन होय ॥ ताते श्री मद्रोकुल काम ॥ १६ नाम भये ॥ सो ॥ श्री मद्रोकुल
 एकेश श्री मद्रोकुल तारक ॥ श्री मद्रोकुल पद्मावली श्री मद्रोकुल संस्तुतः
 १ ॥ याको अथ ॥ अब श्री मद्रोकुल एकेश करे ॥ जो एकेश नाम चंद्रमा सो चं
 द्रमा में पेरुगो है ॥ जो सूर्य की तापको ॥ अमृत की लक्षित निवर्त कर सीवल
 करते हैं ॥ और श्री गोकुल चंद्रमा प्रभू है ॥ सो ब्रज विरताप सो संतप्य होते
 तब निज अधरामृत को पान कर पसो तल करते हैं ॥ और जो तप ताप त
 दुखी जो व गोकुल के चंद्रमा को आश्रय करते हैं ॥ तिन के सर्व तप दूरोते हैं
 भगवद् रास को संबध होय है ॥ लौकिक चंद्रको कला धेनोते हैं ॥ अभाव सो
 प्रकास नही सूर्य के अंग प्रकास नही ॥ ऐसे अन्ये कहो धरे ॥ सो श्री गोकुल चंद्र
 में नही ॥ जिनको सकार प्रकास है ॥ अरवे ब्रज भक्तन संग लीला काते हैं
 और चंद्रमा को मानी को मुख देते हैं ॥ ताते नद प सो राह को मानी रूप है ॥ तिनके
 प्रकास कर्ता है ॥ ताते श्री मद्रोकुल एकेश करे ॥ अब श्री मद्रोकुल तारकः

॥ गोकु ॥ जो श्रीगोकुल श्रीरूप उर्ध्वतमदे ॥ तिनकी गरा मरिमा जानवे मे नारा ॥ श्री
 ॥ २०५ ॥ देखेते सोभाको और सुनेते महात्मको पारनरी ॥ सोप प्रपुराने मे करेते ॥ जो
 गोकुलके गालस्मी नाग्यगा करतहे ॥ परपार नही पावत ॥ और बारह उ
 रामे श्री वासुदे जो सगे व्रजको महात्म कहे ॥ श्रीगोकुलकी लीला करत
 मे अस्तमधेते ॥ और जो अल्प देस मे रहत ॥ श्रीगोकुलकी लीला चिंतनको
 भावसहित विरहकरेके तिनको प्रभूतार संसारसिधते ॥ अपने सनरी
 अनुभवकरावते ॥ जैसे अग्नि कुमारीको भावभयो ॥ तबउनके उरपर
 करंचा धारि मे मनो धी पूरनकीये ॥ ताते जो भाव होय तिनको मनो धी पू
 नकरे ताते श्रीमद्गोकुल तारक करे ॥ अव श्रीमद्गोकुल पद्मावली ॥ जो
 श्रीगोकुल कमलरूपहे ॥ श्रीठाकुरजी सविसको भोग करेते ॥ और कमल
 सूर्यको देखे फूलतहे ॥ और कमलसदांजल मे रहे ॥ सो श्रीगोकुल जोरस
 जलहे ॥ महाशूलैकिक भगवद् महारसरूप जो कबहू नही संरेवे ॥ तो मे
 नानप्रकारके व्रजवसतहे ॥ जैसे नंदयतोदाहृद् गोपीगोप उच भाव मे मन
 रहते ॥ और व्रजभक्तनको रभावहे ॥ एकसंयोगात्मक एकविप्रयोजनक
 या प्रकार गोपीजनको पीव भाव सोई नाना प्रकारके कमलहे ॥ तिनको
 सपान प्रभूधमरोयकरतहे ॥ नंदयतोदाहृद् जो कोवालस्वरूप सो सुषेदतेहे
 सरवाभको गोचारामे व्रजभक्तनको रासलीला मे सुखेदतेहे ॥ ऐसे अ
 लौकिक जलमे नाना प्रकारके कमलहे ॥ सोरसभोधनरूप श्रीठाकुरजीहे
 ताते श्रीमद्गोकुल पद्मावलीके ॥ अव श्रीमद्गोकुल संस्तुतः ॥ जो श्रीठाकुर
 जीके संगे श्रीगोकुलकी सुतहे ॥ सो श्रीठाकुरजीको अति प्रीपहे ॥ सोनाया
 वली मे श्रीआचार्यजी भक्तके नाम करेते ॥ नंदनदन यतोदाहृद् नंदन गोपीव
 द्यभ व्रजनाथ ॥ ऐसे भक्ति सहित सुतते भक्तकी जान करेके प्रभूवेगी
 कृपा करतहे ॥ सो भागवत मे प्रसिद्धे ॥ देव सुत ब्रह्म सुत वेद सुत सबसो
 मिल व्रज संबंधी सुतहे ॥ काहेते श्रीठाकुरजी व्रजभक्तनके रस मे मगने
 सो जव व्रजभक्तनके संबंध सहित श्रीठाकुरजीकी सुत करे ॥ तब श्रीठाकुर
 जी वरुन प्रसन्न होय ॥ जो भरे भक्तनको नाम लेते ॥ ताते श्रीमद्गोकुल संस्तु
 या प्रकार ५ श्लोक अथवा २० नामको निरूपणा भयो ॥ अब कहतहे श्री

श्रीमद्गोकुल संगीत ॥ श्रीमद्गोकुल लास्य कृत ॥ श्रीमद्गोकुल भावात्मा श्री
 मद्गोकुल पोषक ॥ श्रीमद्गोकुल संगीत ॥ जो संसंगीत
 हे ॥ जो मे श्रीगोकुलको संबंधहे ॥ सो संबंधकरां ॥ व्रजकी लीला विना श्री
 रगावतहे ॥ सोकेसे वोलतहे ॥ जैसे दादुर अज्ञानते रहतहे ॥ कहेते श्रीगोकु
 लकी लीला प्रसिधते ॥ श्रीभागवतार्थ जामे श्रीगोकुलको संबंधहे ॥ जोके
 गानके सुनेते कोर ॥ जीवनको उद्धार होय ॥ ऐसे पापदुर्घ कृपा विना सिधनरी
 जब पुष्टि मार्ग मे सरन आर भगवद्दीको संग करे ॥ तब गोकुल संबंधी लीला
 को अनुभव होय ॥ तेसांचे गीत येहे ॥ जो अष्टछाप योगसौ वैभव उष्टि ली
 ला व्रजलीला कांगोय ॥ ऐसे उत्तरसदे ॥ जो श्रीमद्गोकुल संगीत करे
 अव श्रीमद्गोकुल लास्य कृत ॥ जो लास्य नाम अत्यंत प्रीतकोय ॥ जैसे जलधो
 योने स्नेहहे ॥ जलधोना रसन नहोरे ॥ तेसेही गोकुलवना श्रीमद्गोकुल
 और अपने भक्तनको हं यही सिद्धाहेते ॥ जो गोकुलमे स्नेहको गोतव मेरी आत्मा
 होगी ॥ कहेते ॥ जो जहां अतिरूपा मोहित होरवीन तो कीये ॥ तब प्रभू पही आजा
 होय ॥ जो व्रज मे प्रगट होउ ॥ तब सिंगाररसको अनुभव होय ॥ और अग्नि कुमारी
 को श्रीठाकुरजी यह आजा होय ॥ जो व्रज मे यह मनो धी होरोही ॥ तब श्रीकृष्ण
 को प्राणस होय ॥ या प्रकार सबको सिद्धा होय ॥ जो व्रजके भावो नयमसको
 प्राप्त नही ॥ ताते श्रीमद्गोकुल लास्य कृत करे ॥ अव श्रीमद्गोकुल भावात्मा ॥ जो
 श्रीगोकुलके भावात्मक स्वरूपहे ॥ सो तिनके भावसो भजन करे तो पूरन पूर्वी
 तमको संबंध होय ॥ जो सदां विराजतेहे ॥ सो स्वरूप महारसरूपहे ॥ पात्र विना
 नरहे ॥ ताते जब मधुरासो उर सरूप अयो ॥ तिनके भीतर सरूप रथो ॥ सो अ
 नूत संग मधुरापधो ॥ तब व्रजको स्वरूप तो व्रज मे रह्यो ॥ परंतु उर सरूप पाचार्य
 नाजहा तहां नरहे ॥ ताते वासरूपके पाव व्रजभक्तहे ॥ ताते व्रजभक्तनके उद
 य मे रसो काहेते ॥ जैसे व्रजभक्तको स्वरूप भावात्मकहे ॥ तेसे श्रीप्रभूसात्म
 कहे ॥ तेसे व्रजभक्त श्रीठाकुरजीके संबंधते रसात्मकहे ॥ ताते दोऊ व्रज मे
 स्थिर रहे ॥ सो जाको व्रजभक्तनके भाव सहित जब भावना होय ॥ तब वासरूप
 पको अनुभव होय ॥ तेसे पुष्टि मार्ग मे श्रीआचार्यजी सेवाकी रीत प्रगट करे
 तब श्रीकृष्णको प्राप्त होय ॥ ताते व्रजभक्तनकी भावना सो भजन करे ॥ ताते

॥ गेडु ॥ श्रीमद्भक्तिकुलजीवात्माकरे ॥ अथ श्रीमद्भक्तिकुलपोषकः ॥ जो श्रीगोकुल को पोष
॥ २०६ ॥ क श्रीकृष्ण हैं जैसे माता पिता पुत्रको पोषण करते हैं ॥ और श्रीगोकुलमें भक्त
 रहते हैं ॥ तो जवावस्सों संतत्य होते हैं ॥ नवकाहमिस प्रभु उर के धारण धारि प्रा
 न पोषक हैं ॥ और जो जीव अनुपरीत हैं ॥ तिनको सर्व प्रकार पोषते हैं ॥ सो भक्ति
 ब्रह्मनी में श्री आचापजी करे हैं ॥ बाधसभावनायानु नैकांते वासस्थान ॥ हीरक
 सर्व तो रक्षा करि व्यतिन संशय ॥ १ ॥ कोहते कोरि जीव बुधिते द्वेष करते हैं ॥ पाप
 को कोरि जानत नही ॥ तिनहू को पोषन करत हैं ॥ ताते श्रीमद्भक्तिकुलपोषक
॥ अथ ॥ श्रीमद्भक्तिकुलहृदयस्थान श्रीमद्भक्तिकुलसंवृतः ॥ श्रीमद्भक्तिकुलहृदयस्थान
 श्रीमद्भक्तिकुलमोदितः ॥ **॥ याको अर्थ ॥** अथ श्रीमद्भक्तिकुलहृदयस्थाने ॥ जो श्री
 भक्तिकुलप्रभूको हृदयस्थान है ॥ ताते श्रीगोवर्धनव्रजयमुना नद्यसाहि सब भ
 गवदस्वरूप करे ॥ और स्थिर ब्रह्माको आजादेके ब्रह्मद्वारा प्रगटकीये ॥ सो
 श्रीभागवत तत्त्व तीयस्कंधमें प्रसिधे हैं ॥ और ब्रजकी सामि श्रीहृदयने प्रगट
 है ॥ कोहते ॥ लीलास्थिको सामि श्रीमें श्रीकृष्णके मन करइसो सत्त्व प्रगट
 भयो ॥ सत्त्वसिद्धते अनेक स्वरूप लीला मध्यपती सो ब्रजमें गोपनित्य
 लीला है ॥ ताते श्रीमद्भक्तिकुलहृदयस्थानं करे ॥ अथ श्रीमद्भक्तिकुलसंवृतः
 जो श्रीठाकुरजो श्रीगोकुलके लीकसंबंधी वसतें ॥ जो लीला वाती सवगोकुल
 को करतें ॥ ऐसे रसके समुद्रें जो और कछु नही जानत ॥ और आपंचाधा
 ई में करतें ॥ जो मरो प्राग्वतुनो मरी लीये ॥ ताते जाको जैसा भावे देखते हैं ते
 सो मनो ये सिद्ध करतें ॥ ताते श्रीमद्भक्तिकुलसंवृतः ॥ अथ श्रीमद्भक्तिकुल
 जो श्रीगोकुलमें श्रीकृष्णवैराजते हैं ॥ श्रीनदपसोदाजी के धार करते मापाके
 प्राग्व रघीपीछे को है ॥ ताते यह जानना जो माया अकेली न भई ॥ तहां कोरि
 करे परे कैसे जानते नहां कहां तें ॥ जो माया अकेली होती तो मायाको उपजा
 यो इध ॥ श्रीयसोदाजीके स्तन नमो तो श्रीकृष्णको अंगीकार करने
 और आपको दर्शन नही होते ॥ काहते जीवको मापाको आचाने हैं जि
 तनी माया रू करे तिनो दसिन होय ॥ सो जाको जैसा भाव ताको वे सोही द
 र्शन भयो ॥ ताते ब्रजको यह भाव भयो ॥ जो परे मरि रक्षा परे गे ॥ सो अर्थ ली
 लाकर ब्रजभक्तवको स्वरूपानंदको अनुभव कराय ॥ ताते श्री आचापजी

भावाप्रकाचने दराय जो के धारकी गिन प्रगट ॥ मयो रसहित ताके भीतर और
 भागे व्रजभक्तन के रित्त भावना सो प्रगट करी ॥ ताते भगवदगीये वे ॥ मक्ति गो
 कुलने प्रगट भई ॥ ताते श्रीगोकुलके अर्थ विना और भाके न होय ॥ यवचने
 सदा सवोत्पनासेयो भगवान्गोकुलसवर ॥ अथ नयो गोपिकायदो श्रीभुनचं
 दावेन स्थित ॥ १ ॥ ऐसे श्रीगोकुलपति सदा विद्वत्करतें ॥ तिनने ॥ पुष्टिसको
 अनुभव होय ॥ ताते श्रीमद्भक्तिकुलदक्यु करे ॥ अथ करे श्रीमद्भक्तिकुलमोदितः
 जो श्रीगोकुलके आनंददाता श्रीकृष्ण हैं ॥ जाहि नवे कुंठे ते गोकुलधारे ता
 हिनते भक्तन के दुरवदर ॥ और मनो अर्थमिध भये ॥ सब अपनो जन्मसाथिक जान
 नित्ये करतें ॥ और यमुना जीम प्रहोय रसधारवहावतें ॥ और गौ आनंद सो द
 धरस वहुत वडो ॥ एवाल अंगार का कामी और दर्शनको आवते हैं ॥ और ब्रज
 भक्त मन्त्र होय मंगलासाज दसिन कर य सोदाधजाते हैं ॥ ऐसे श्रीठाकुरजो धार
 धर आनंदकीये हैं ॥ ताते श्रीमद्भक्तिकुलमोदितः करे ॥ **॥ अथ श्रीमद्भक्तिकुल**
पीस श्रीमद्भक्तिकुलमोदितः ॥ श्रीमद्भक्तिकुलभोग्य श्रीमद्भक्तिकुलसर्वकृत् ॥
॥ याको अर्थ ॥ अथ करे श्रीमद्भक्तिकुलभोग्य ॥ जो श्रीकृष्णको कुलश्रीसोपो
 जन करे सतें ॥ कोहते ॥ जहां तारि श्रीकृष्ण वैकुण्ठते गोकुलनही पधारे ॥ तहां तारि
 श्रीगोकुलअपनो महात्म नही जनापो ॥ सो यह पति वृताको धर्म हो ॥ अपनो च
 नुराई तत्काल प्रसिध करतें ॥ और नाना प्रकार के संकेत प्रभु और भक्तन सो
 होतें ॥ श्रीगोकुलप्रभूको और भक्तनको अति अनुकूलें ॥ ताते श्रीगोकुल
 श्रीयरे ॥ ताते श्रीमद्भक्तिकुललालिसः करे ॥ अथ करे श्रीमद्भक्तिकुलभोग्य श्री
 जो जैसे वैकुण्ठमें पुरय भक्तलक्ष्मी ॥ ताको भोग्यारा पाकतें ॥ और श्रीगो
 कुलव्यापि वैकुण्ठ है ॥ तहां आप भोग करतें ॥ ताते श्रीगोकुलको सबलक्ष्मी
 लज्जा पावत है ॥ सासं दालक्ष्मीनारायण वैकुण्ठमें ब्रजको लीलाको स्मरण
 करतें ॥ तथा और और तार अंसकला करके ॥ सो तै मही तिनको भोग्य कर
 वे में भोग्य भक्तें ॥ श्रीगोलमें साक्षात् पूरन प्रहो ॥ तम लीलाकवे संधी
 ताते श्रीगोकुलके ब्रजभक्तपुष्टि ॥ सर्व सामि श्री भोग्युक्तें ॥ सो सामि श्री श्री
 गोवर्धन श्रीयमुना सो पुष्टि महा रस रूपतें ॥ तहां अने कथ क्षतता प्युपथी
 ब्रजभक्तसोमापमानतें ॥ तामे राव देखके लज्जा पावत है ॥ लक्ष्मीपुन्याय

गोकु ॥ रहोहें ॥ श्री श्रीपुनजीकेसोभादेव श्रीसुखलुभाउरहे ॥ तातेजोभागी ॥
 प्रभु व्रजभक्तनसंग गोकुलको सोद्वार कामेनारी ॥ कोरते कहां ॥ १५६ ॥ जात
 नो कहां ॥ चपटानी ॥ ऐसो रज्यस्थलहे ॥ उहां मर्यादारीनसोमनीनो ॥ ताते श्रीगो
 कुलकी लीला व्रजभक्तनको भाव भरसभोगकउहं नही ॥ ताते श्रीमद्रोकुल
 भोग्यश्रीके ॥ अबकहे श्रीमद्रोकुलसर्वरूत ॥ पानाममें तो अनेकभावहे ॥
 कोहेते सर्वलीला श्रीगोकुलकीयेहे ॥ सोसर्वलीला व्रजभक्तनको करीसक्य
 ताते व्रजभक्त ॥ श्रीरूतकी को भजनकीये ॥ जोपरमारी प्रथापरेगे ॥ श्रीगो
 लीला श्रीगोकुलमें व्रजभक्तनसंगकीये सोकरूं नही ॥ ताते ज्योपियै कुठमें
 जो लीलाकारतहे ॥ सोअपूणोपवीतम व्रजमें प्रगट होयके ॥ श्रीपुननातर
 अनेकलीला करतहे ॥ सोलीलासोपरहे ॥ सोव्रजभक्तनके चरनन कोर
 केअप्यते प्रगट होय ॥ सोउह अश्रयसिधरोइ वेकीजोग्यता श्रीअप
 केचरनकमलकेअश्रयतेहोइ ॥ तातेसर्वभावको गोकुलकीखिलाचिन
 कजो ॥ सोश्रीअचरिजीकेहेहे ॥ सर्वदासर्वभावेन भजनोपोवजाधिप
 स्वस्ययमेवधर्मो नान्यह्यपिकदाचन ॥ १५ ॥ पानधर्मसर्वपर यहीहे ॥
 ह्योपुर्वीतममें भावसोलीलाको अनुभवकनो ॥ ताते श्रीमद्रोकुलस
 कृतके ॥ याप्रकार ८ श्लोकके अर्थभयो ॥ अथगोकुलाष्टकके पाठकोफ
 लकलहे ॥ सो ॥ इमानिश्रीगोकुलेश नामानि वदने मम वावसंतस्तत
 चैवलीलां हृदये सदा ॥ ध्यायोको अर्थ ॥ परजे श्रीपूजापुर्वीतमके नामले
 लासहित श्रीगोकुलसंबंधी ॥ सोश्रीगुसांजीकेहे जोमेरेकमलमुस नाम
 संतत जोनिरंतर वासको ॥ कोहेसो ॥ मेंसर्वे साधनकररहित हो ॥ तातेपर
 जो नामहे ॥ तिनको मेरी रसना अष्टप्रहरस्मरणको ॥ सोरन नामके चिंतनेत
 श्रीरूतलीलासहित मेरे हृदयमें वासकरंगे ॥ तातेपनामबाह्यारउचरते
 याको श्रीम प्राययेहे ॥ जोमेरेउरमें यह मनोष्येहं ॥ जोअंगार रससोली
 लासहित श्रीस्वामिनीजी संगनिहुंजमें बिहारकारतहे ॥ सोलीला मे
 उरमें वसो ॥ सोइसकलापूरीश्रीरूत सोइस्त अंगारपूरीश्रीस्वामिनीजी
 ताते में यद ३२ नामकरगोकुलाष्टककीये ॥ सोपेनामसर्वलीलासंबंधीहे
 सोरनकेअश्रयते सर्वलीलाको अनुभवहोपगे ॥ याप्रकार श्रीगुसांजी

तिदाकीर गोकुलाष्टकपाठकीये ॥ परअपनेसे वक्तकों यह जताये
 जोपोगोकुलाष्टककोपाठको ॥ श्रीरसन नामको हृदये मरावे ॥ ३२ नामने
 श्रीअपने पूरीपुर्वीतम अष्टलीलासहित हृदयमें आप वसेंगे ॥ जोश्रीरिग
 जो श्रीअचरिजी श्रीश्रीगुसांजीको चलनाको नमस्कार कर कटतेहे
 जैसे मेरी बुद्धिमें महाप्रभुके अनुग्रहते स्फुरतभरी ॥ सोमंको ॥ कोहेते ॥ परजो
 सिंगार रसात्मक ३२ नामने अपार भावहे ॥ सोश्रीगुसांजीके हृदयमें स
 दास्थितहे ॥ सोजोको प्राप्तिहोवहुन दुर्लभले ॥ तातेपोगोकुलाष्टकके
 पाठते ॥ अनेक हृदयमें अविद्याहे ॥ तिनको इकर सवित्म भावहोये ॥ ऐसो
 प्रताप श्रीगोकुलाष्टकके नामको ॥ ताते वैष्णवको पायुंयको भावसांत
 पाठकरने कोहेते ॥ श्रीगुसांजीके वचना मृतमहारासरूप ॥ गोकुलाष्ट
 करे ॥ रसरूपताते गोपरापना ॥ तातेउनको रूपतेवंगरोफलितहोय ॥

रीतश्रीवद्वभा चरिचरितं ॥ अथकीरीका भावा में संग ॥ सुभन

सर्वोपजी	१२१
वैश्राष्टक	२०
स्फुरतकेश	२६
नामरत्नरस	४५
यमुनाष्टक	५४
दीनबाध	६०
सिंधालररस	७५
सिद्धतमुक्तानक	७८
पुष्टप्रवाहमयी	८२
नररत्न	११३
अंतकरणप्रबोध	११८
विवेकधेकीष्टक	१२१
रूपाश्रय	१२३
जनुश्रीवा	१३१